उठो अर्जुन, जागो मेरे हिन्दू राष्ट्र - 1

राम मंदिर तुम्हें पुकारता

कायेन वाचा मनसेन्द्रिऐवा बुध्यात्मना वा प्रकृते स्वभावात।
करोमि यद् यद् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि।।

यशोधर्मन

© 2003-2010 मानोज रखित (यशोधर्मन)

- मानोज रखित, ६०४ डिस्कवरी ८, दत्त पाड़ा, बोरीवली पू, मुंबई ४०००६६
- ईमेल maanojrakhit@yashodharman.in
- वेब साइट http://www.yashodharman.in

- **मुद्रणालय -** आइडियल प्रेस, अम्बा वाड़ी, दहिसर, मुंबई ४०००६८
- **ऑर्डर के लिए संपर्क करें -** श्री देवेन्द्र वारंग, चलभाष ०९८९२०७५४३१ ईमेल dvwarang@gmail.com, आइडियल प्रेस, अम्बा वाड़ी, दहिसर, मुंबई ६८
- **प्रथम हिन्दी संस्करण** 2003 अक्टूबर वर्तमान संस्करण 2010 नवंबर
- **प्रथम अंग्रेजी संस्करण** 2003 नवंबर

- **सहयोग राशि -** दान स्वरुप जो भी दिया जाये उससे अन्य पुस्तकें छपेंगी (यदि आप चाहते हैं कि यह धर्म यज्ञ आगे बढ़ता रहे)
- **उद्देश्य -** इस पुस्तक को लिखने तथा प्रकाशित के पीछे मेरा एक ही उद्देश्य है कि आप सत्य को जानें, परखें, तथा अपने निर्णय स्वयं लें।
- **आपके द्वारा प्रकाशन -** यदि आप जन-जागरण का संकल्प लेकर इस पुस्तिका को बँटवाना चाहें तो निःसंकोच इसकी प्रतियाँ करवा लें अथवा इसे छपवा लें। आप चाहें तो अन्य किसी भाषा में इसका अनुवाद करवा कर भी छपवा सकते हैं। छपने के पश्चात दस छपी प्रतियाँ तथा एक सी-डी (फ़ॉन्ट सहित) रजिस्ट्री अथवा कुरियर द्वारा मुझे भेजें।
  - आपकी छपवायी पुस्तक में आपका नाम पता प्रकाशक के रूप में होना आवश्यक है तथा जहाँ से आपने वह संस्करण छपवायी हो उस मुद्रणालय का नाम पता छपा होना भी अत्यंत आवश्यक है, अन्यथा ऐसा प्रकाशन अवैधानिक होगा।
  - आपके प्रकाशन में ISBN का होना आवश्यक नहीं। मेरे प्रकाशन का ISBN 978-81-89990-18-3 (International Standard Book Number अर्थात अंतर्राष्ट्रीय मानक पुस्तक क्रमांक) है जिसका प्रयोग आप नहीं कर सकते।
  - पुस्तक के विषय-वस्तु में यदि किसी प्रकार का अन्य कोई परिवर्तन करना आवश्यक जान पड़े तो कृपया मेरी अग्रिम अनुमति लिखित रूप में अवश्य ले लें, अन्यथा ऐसा प्रकाशन भी अवैधानिक होगा।

घटना क्रम 5
एक प्रोफेसर जिसने दिशा दी आगे की घटनाओं को 5
झूठ की बुनियाद पर खड़ा एक महल 6
उस प्रचार के पीछे छुपी हुई गहरी चाल 7
एक अन्य प्रोफेसर जिसने शतरंज के मोहरों को चुना 8
एक असत्य अपने आप में पर्याप्त नहीं होता 8
उन्होंने ऐसा क्यों किया 10
अब बड़े समाचार पत्रों का भी चरित्र देख लीजिए 10
झूठ के पुलिंदों को ढाँकने के लिए चोरी की भी तो आवश्यकता होती है 11
एक ज्वलंत उदाहरण आपके सामने 12
धर्म निरपेक्षता का यह आडम्बर 13
आप संभवतः लक्षणों को नहीं पहचान पाते 14
हिंदू ब्राह्मण की विडंबना 15
झूठ जिनकी विरासत है और जो झूठ बाँटते फिरते हैं 16
प्रमाणों का परीक्षण करने देश के कोने-कोने से 40 पुरातत्वज्ञ आए तथा परीक्षण करने के पश्चात सभी एकमत हुए कि वहाँ मंदिर ही था 17
न्यायालय किसे कहते हैं - हाँ न्यायालय इसे कहते हैं 20
ग्यारहवीं शताब्दी का श्री विष्णु-हरि का शिलालेख जो स्पष्ट रूप से हमें बताता है कि यह मंदिर था श्री राम का 22
3 हजार घंटे सोचने के बाद सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय देखिए 24
एक बार फिर वही खेल-तमाशा - इस बार उच्च न्यायालय द्वारा 26
उसे मस्जिद क्यों कहते हैं हमारे ये समाचार पत्र 27
कहाँ खो गई उनके अंतःकरण की आवाज 29
क्या व्यर्थ ही बहा था एक लाख अस्सी हजार हिंदुओं का लहू 33
आइये अब कुछ ऐतिहासिक तथ्यों पर नजर डालें 33
यह सब क्यों हुआ इसे नहीं समझेंगे तो यही सब फिर से दोहराया जाएगा 35
बाकी विश्व में आज क्या हो रहा है 37
युधिष्ठिर की विडंबना 38
संदर्भ सूची BIBLIOGRAPHY 41

प्रार्थना

वक्रतुण्ड महाकाय सूर्यकोटि समप्रभ।
निर्विघ्नं कुरु में देव शुभकार्येषु सर्वदा।।

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता,
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना।
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर् देवैस्सदावन्दिता,
सा माम् पातु सरस्वती भगवती निश्शेषजाड्यापहा।।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

समर्पण

कायेन वाचा मनसेन्द्रिऐवा बुध्यात्मना वा प्रकृते स्वभावात।
करोमि यद् यद् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि।।

प्रिय पाठक

इस पुस्तक को लिखने के पीछे मेरा एक ही उद्देश्य है कि आप सत्य को जानें, परखें तथा अपने निर्णय स्वयं लें।

मानोज रखित (यशोधर्मन)

वेब साइट http://www.yashodharman.in पर जाकर आप इस पुस्तक को नि:शुल्क पढ़ सकते हैं, छाप सकते हैं, मित्रों तथा संबंधियों को ईमेल द्वारा भेज सकते हैं

संदर्भ सूची Bibliography

रखित, मानोज, अयोध्या श्री राम मंदिर फ़ैक्टस दैट डिड नॉट रीच यू ऑल, मानोज रखित प्रकाशन, मुंबई, 2003

एल्स्ट, डॉ कोएनराड, अयोध्या द केस अगेंस्ट द टेम्प्ल, वॉएस ऑफ़ इंडिया, नयी दिल्ली, 2002

काटज़ू, प्रॉफ़ेसर मंजरी, विश्व हिंदू परिषद ऐंड इंडियन पॉलिटिक्स, ओरियेंट लॉन्गमैन, पुस्तक समीक्षा, द फ़्री प्रेस जरनल, मुम्बई संस्करण में प्रकाशित, 30 मार्च 2003, स्पेक्ट्रम पृष्ठ 6

कामथ, एम वी, अयोध्या ऐन अनहैप्पी रिफ़्यूज़ल बाई द मुस्लिम्स, द फ़्री प्रेस जरनल, मुम्बई संस्करण, 17 जुलाई 2003, एडिटोरियल पृष्ठ 4

गुप्ता, डॉ एस पी, इफ़ ओनली द कोर्ट हैड एग्ज़ैमिन्ड द एविडेन्स, द अयोध्या रेफ़रेन्स सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, 1995

गोयल, श्री सीता राम, हिंदू टेम्प्ल्स - व्हॉट हैप्न्ड टू देम वॉल्यूम टू द इस्लामिक एविडेन्स, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, 2000

जॉयस, मुख्य न्यायाधीश एम रामा, ऑन द डिसीज़न नॉट टू डिसाइड, द अयोध्या रेफ़रेन्स सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, 1995

द सुप्रीम कोर्ट जजमेंट, द अयोध्या रेफ़रेन्स सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, 1995

बाहरी, डॉ हरदेव, राजपाल हिंदी शब्दकोश, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, 2002

शर्मा, विशाल, बाबर्स ऐबेरेशन हॉन्टस ए मिल्लेनियम, द फ़्री प्रेस जर्नल, मुंबई संस्करण, 17 जुलाई 2003, ओप-एड पृष्ठ 5

शोउरी, डॉ अरुण, भूमिका द अयोध्या रेफ़रेन्स सुप्रीम कोर्ट जजमेंट ऐंड कॉमेंटरीज़, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, 1995

राजाराम, डॉ एन एस, ए हिंदू विउ ऑफ़ द वर्ल्ड एस्सेज़ इन द इन्टेलेक्चुल क्षत्रिय ट्रडिशन, वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, 1998

जब अधर्म का हो बोलबाला, और धर्म का दम घुटता हो, तो उठती है एक आवाज़...

हमें तो तलाश है उनकी, जिनके दिन या रात चाहे सड़क पर बीतते हों या खेतों में मज़दूरी कर, पर आज भी जलती जिनके हृदय में मशाल है।

जो हिंदू अपने को जानते हैं, जो हिंदू अपने को मानते हैं, और जिनकी साँस में बसती है हिंदुत्व की धारा।

जिनका ख़ून हिंदू है, जिनका ईमान हिंदू है, जिनकी सोच हिंदू है!

घटना क्रम

मुस्लिम लीडरों ने दावा किया था कि यदि यह सिद्ध कर दिया जाए कि उस जगह पर मस्जिद के पहले एक मंदिर हुआ करता था तो वे वह जगह हिंदुओं को दे देंगे। इस बात पर चंद्र शेखर सरकार ने यह तय किया कि सारा निर्णय इस बात पर टिका होना चाहिए कि क्या वहाँ मस्जिद के पहले मंदिर था? चंद्रशेखर सरकार के अनुरोध पर बीमैक (बाबरी मस्जिद ऐक्शन कमिटी) व विहिप (विश्व हिंदू परिषद्) इस बात के लिए सहमत हुए कि वे अपने-अपने पक्ष के ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत करेंगे (समय - दिसंबर 1990 एवं जनवरी 1991) और उन पर बहस कर इस निर्णय पर पहुँचेंगे कि क्या जन्मभूमि-मस्जिद के पहले वहाँ मंदिर हुआ करता था। **ध्यान दीजिए 1990-1991 की बात है यह--बाबरी ढाँचा अभी गिरा नहीं था।** प्रॉफ़ेसर हर्ष नारायण, प्रॉफ़ेसर बी पी सिन्हा, डॉ एस पी गुप्ता, डॉ बी आर ग्रोवर एवं श्री ए के चैटर्जी ने विहिप का प्रतिनिधित्व किया। डॉ एस पी गुप्ता विहिप से विधिवत् जुड़े हुए थे पर अन्य लोग नहीं। बीमैक के लोग, आइ-सी-एच-आर (इंडियन काउंसिल ऑफ़ हिस्टॉरिकल रिसर्च अर्थात् भारतीय ऐतिहासिक खोज परिषद्, नई दिल्ली) के प्रॉफ़ेसर इर्फ़ान हबीब के पास गए, जिन्होने सचमुच के इतिहासज्ञों की एक टोली जुटाई जिसका नेतृत्व प्रॉफ़ेसर आर एस शर्मा ने किया। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ के प्रॉफ़ेसर इर्फ़ान हबीब बहुत दूर की सोचते थे। **उन्होने स्वयं इस टोली का नेतृत्व नहीं किया-- इसके पीछे एक बड़ी सोची-समझी चाल थी।**

एक प्रोफेसर जिसने दिशा दी आगे की घटनाओं को

बेल्जियम के डॉ कोएनराड एल्स्ट ने अपनी पुस्तक में जे-एन-यू (जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) के स्वनामधन्य इतिहासज्ञ आर एस शर्मा का जिक्र किया है। जब उसका जन्म हुआ होगा तो उसके माता-पिता ने बड़े लाड़ से, उसे भगवान श्री राम के चरणों में समर्पित करते हुए, उसका नाम राम शरण रखा होगा। माता-पिता ने बड़ी आस से उसे ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा दिलाई होगी कि हमारा बेटा बड़ा आदमी बन कर

वंश का नाम रोशन करेगा। उस बेटे ने वंश का नाम रोशन तो किया, पर किस प्रकार से यह आगे चल कर देखेंगे। फ़िलहाल उसके व्यक्तित्व का विकास किस प्रकार से हुआ होगा इसके बारे में थोड़ी सी कल्पना कर लें तो सम्भवतः आप अपने आज के बच्चों को थोड़ा-बहुत समझ पायेंगे। एक बार एक ईसाई फ़ादर ने कहा था कि हम अपने स्कूल में तुम्हारे बच्चों को ईसाई तो शायद न बना पायेंगे पर जब हमारे स्कूल से शिक्षा पाकर निकलेंगे तो वे सच्चे हिंदू भी न रह जायेंगे। **यह एक अकाट्य सत्य है जिसे हम हिन्दू माता-पिता सहजता से नहीं समझ पाते।** वह मेधावी बच्चा ईसाई तो न बन पाया पर श्री राम की शरण से भी बहुत दूर चला गया। जब वह सच्चा हिन्दू न रहा तो अपनी जड़ों से कट गया। ईसाई भी न बन सका तो अध्यात्मिक स्तर पर त्रिशंकू की भाँति अपने आप को शून्य में लटका पाया। यही विडम्बना थी हमारे जवाहरलाल नेहरू की जिन्हें आधुनिक भारत का निर्माता कहा जाता है। तो फिर कैसा भारत बना होगा इसकी कल्पना आप स्वयं ही कर लें! खैर, राम शरण की विडम्बना थी कि वह शून्य उसे जीने न देता। उस खालीपन को भरना उसके लिए आवश्यक था। आयु में जवान था और उसका दिल सीने के बायीं ओर धड़का करता था। भावनात्मक झुकाव का वाम पंथ की ओर जाना उस आयु में एक स्वाभाविक प्रक्रिया थी। **यह कहानी केवल राम शरण की ही नहीं बल्कि आपके परिवार अथवा आपके आसपास के अनेक युवाओं की है।**

झूठ की बुनियाद पर खड़ा एक महल

प्रॉफ़ेसर आर एस शर्मा एवं उनकी सचमुच के इतिहासज्ञों की टोली ने **अच्छा प्रचार किया कि वे सब स्वतंत्र इतिहासज्ञ थे।** जनसाधारण की दृष्टि में स्वतंत्र वह है जो किसी पर निर्भरशील नहीं है, कम से कम आर्थिक दृष्टि से। स्वतंत्र व्यक्ति से यही आशा की जायेगी कि उसका दृष्टिकोण स्वतंत्र होगा, दूसरे के कहे के अनुसार सजाया-सवाँरा गया न होगा। लोग यही सोचेंगे कि वह जो कह रहा है वह उसकी अपनी सोच है जो उसके अपने परीक्षण एवं अपने अनुभव के आधार पर ही बनी है। लोग यह आशा नहीं करेंगे कि वह केवल एक नौकर है जो परदे के पीछे छुपे मालिक की बोली

न करेगा। यदि ऐसे ही जीना चाहते हो कायरों की भाँति, और इस भ्रांति में जीना चाहते हो कि हमें शांति चाहिए, तो यही मुबारक हो तुम्हें! पर इतना जान लो कि सच्ची शांति तो हासिल होती है केवल उसे जो शक्तिशाली होता है, निर्बल तो केवल भ्रम में जीता है! क्या आवश्यकता थी भगवान श्री कृष्ण को, कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में दुबके हुए अर्जुन को ललकारने की? हे पृथा के पुत्र अर्जुन, तुझे नामर्द नहीं बनना है। ऐसा तेरे लिए कतई योग्य नहीं है। हे परंतप, हृदय की इस तुच्छ दुर्बलता का त्याग कर अब तू युद्ध के लिए तैयार हो जा (श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2 श्लोक 3)।

श्री राम का मन्दिर तो निमित्त मात्र है! प्रश्न यह है कि तुममें धर्म की रक्षा हेतु उठ खड़े होने की मानसिक इच्छा एवं शारीरिक योग्यता है, कि नहीं! वह निर्बल जो सत्य-असत्य में अंतर नहीं कर पाता, वह दुबका हुआ जिसे उचित-अनुचित में फ़र्क़ नहीं जान पड़ता, वह भटका हुआ जिसे न्याय-अन्याय की परवाह नहीं, वह क्या करेगा अपनी रक्षा, अपने धर्म की रक्षा, अपने कुल की रक्षा, अपने समाज की रक्षा, अपने राष्ट्र की रक्षा, इस मानव समुदाय की रक्षा?

माना कि भगवद्गीता आपको त्याग की शिक्षा देती है। आप चाहें तो इस जीवन रूपी युद्ध क्षेत्र से भाग खड़े हो सकते हैं एवं अपने इस कर्म को गौरव प्रदान करने की लालसा से यह दावा कर सकते हैं कि आपने युद्ध जैसी संहारक प्रक्रिया का त्याग किया। पर अपने आप को इस भुलावे में न रखें कि भगवद्गीता इसी त्याग की शिक्षा आपको देती है। कदापि नहीं! श्री नारायण ने आपको, आपका कर्म त्यागने को नहीं कहा था। उन्होनें तो आपको, अपने कर्म का फल त्यागने को कहा था। पर आप तो कदाचित अपने कर्म को ही त्यागने हेतु उद्यत हो गए!

वे क्षमा करने में अपना बड़प्पन मानेंगे एवं अधर्म को पनपते देते रहेंगे तो एक दिन यही अधर्म सक्षम होकर धर्म के अस्तित्व को ही मिटा देगा।

युधिष्ठिर की विडंबना

धृतराष्ट्र एवं युधिष्ठिर लगातार दुर्योधन के अन्याय पूर्ण कार्यों को अनदेखा करते रहे और इस प्रकार, परोक्ष रूप से अन्याय को प्रश्रय देते रहे। अंत में इसका परिणाम हुआ महाभारत का युद्ध, जिसे टाला जा सकता था यदि अन्याय का तिरस्कार एवं न्याय की प्रतिष्ठा समय रहते की जाती। क्या आज हमारे बुद्धिजीवी, हमारी मीडिया, हमारे न्यायालय एवं हमारी सरकार उसी धृतराष्ट्र की भूमिका नहीं निभा रही है? क्या आज आप स्वयं उसी युधिष्टिर की भूमिका नहीं निभा रहे हैं? अंत में पाँडवों ने दुर्योधन से क्या माँगा था? दे दो हमें केवल पाँच गाँव हम पाँचों के लिए, हम नहीं चाहते रक्तपात! पर उस दुर्बुद्धि दुर्योधन और उसके सलाहकार मामा शकुनि को वह भी स्वीकार्य न था। बिना युद्ध के, सूई की नोक के बराबर ज़मीन देने को भी तैयार न हुए वह। आज मुसलमानों की सोच भी तो यही है! दुर्योधन दंभी बन गया था इतना कि पाँडवों की विनम्रता को उसने पाँडवों की निर्बलता समझने की भूल की। यही तो स्थिति है आज, हिंदुओं के विनम्रता की। मुसलमानों ने हिंदुओं की विनम्रता को उनकी कमज़ोरी मान लिया है। हाँ एक अंतर अवश्य है। पाँडव एकजुट थे और हिंदू बंटे हुए हैं। उन्हें बाँट कर रख दिया है पिछली छः पीढियों की ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा ने। इसकी बुनियाद रखी गई थी प्राचीन हिंदू शिक्षा पद्धति का योजनाबद्ध रूप से समूल उन्मूलन कर। उससे भी बड़ी खूबी यह रही है कि उसी ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा पद्धति का अत्यन्त चतुराई से प्रयोग कर उन्होंने हम हिंदुओं को यह मानना सिखा दिया कि हम बँटे हुए हैं जाति प्रथा के कारण एवं अपनी ही कमजोरियों के कारण। जो कुछ भी था हमारे इतिहास में अपने अतीत पर गर्व करने लायक, उन सब को इतिहास की पाठ्यपुस्तकों से मिटा दिया गया। बड़े ही योजनाबद्ध रूप से हमारी प्रत्येक पीढ़ी को अपनी पिछली पीढ़ी से अधिक हीन भावना से ग्रस्त कर दिया गया। यह जान लो हिंदुओं कि जब तक तुम मूर्खों की भाँति बिखरे रहोगे, तब तक तुम्हें निर्बल मान कोई तुम्हारी इज़्ज़त

बोल रहा है। उसके पास विश्वविद्यालयों की पदवियाँ एवं उनके आधार पर अर्जित किये गए अन्तर्राष्ट्रीय मान्यतायें हैं। अतः लोग यह शंका नहीं करेंगे कि उसका योगदान केवल अपनी मुहर लगाने तक ही सीमित है। बाद में यह बात सामने आई कि वे सभी बीमैक की चाकरी में थे और वे जो भी कह रहे थे वह, स्वतंत्र रूप से नहीं, अपितु अपने निहित स्वार्थ से प्रेरित होकर, बीमैक से पैसा लेकर। यह तो उनका चरित्र है--चरित्र जो झूठ की बुनियाद पर टिका हुआ है। यह एवं बहुत सारी अन्य बातें उनके चरित्र के बारे में हम जान पाते है युरोपियन इतिहासज्ञ डॉ कोएनराड एल्स्ट से, जिन्होने भारत में आकर और यहाँ रहकर इन बातों पर खोज बीन की।

उस प्रचार के पीछे छुपी हुई गहरी चाल

प्रश्न उठता है कि उन्होने आरंभ से जान बूझकर इस झूठ का प्रचार क्यों किया? **इस झूठ को बड़े समाचार पत्रों के माध्यम से फैलाने की क्या आवश्यकता थी?** इसके पीछे छुपी हुई एक बड़ी सोची समझी चाल थी। वे जानते थे कि जनता उस बात को याद रखती है, जो बात शुरू-शुरू में ज़ोर-शोर से कही जाती है। आरंभ में पाठकों की रुचि प्रत्येक नए विषय पर होती है। समय के साथ वे विषय पुराने पड़ जाते हैं एवं पाठकों की रुचि उनसे हट जाती है। उनकी जगह नए विषय पाठकों के लिए आकर्षण का केंद्र बन जाते हैं, **या फिर बना दिए जाते हैं।** लोग वही याद रखते हैं जो उन्होने आरंभ में हो-हल्ले के साथ सुनी थी। बाद में, अगर कहीं समाचार पत्र के किसी अंदरूनी पृष्ठ पर, किसी छोटे से कोने में, एक छोटा सा खंडन, या विरोध छपता भी है, तो यह आवश्यक नहीं कि **उन्हीं पाठकों की दृष्टि उस पर पड़े** जिन्होंने पहले जोर-शोर से फ़ैलाये गए असत्य को पढ़ा था। इस बात का भरपूर लाभ उठाया उन्होने। जनता के मन पर यह छाप छोड़ दी कि वे सभी स्वतंत्र इतिहासज्ञ थे, और जो कुछ भी वे कह रहे थे, बिना किसी स्वार्थ के, केवल सत्य से प्रेरित हो कर के, जबकि यह सब वे बीमैक से पैसा लेकर कर रहे थे, सत्य को असत्य से ढाँपने के लिए, और इसलिए उन्होनें बेईमानी का सहारा लिया आरम्भ से ही।

एक अन्य प्रोफेसर जिसने शतरंज के मोहरों को चुना

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के प्रॉफ़ेसर इर्फ़ान हबीब जानते थे कि स्वयं मुस्लिम होने के कारण उनकी स्वतंत्र भावना पर संदेह किया जा सकता है। उन्होने ख़रीद लिया बड़ी ही सहजता से, हिंदू नाम रखने वाले कॉम्युनिस्ट-मार्कसिस्टों को, जो पहले से ही कट्टर हिंदू-विरोधी रहे थे। **अनेक हिंदुओं में एक विशेष प्रकार की ग़लतफ़हमी पायी जाती है।** बहुधा वे एक हिंदू नाम को दूसरे हिंदू नाम से अलग नहीं कर पाते। उन्हें लगता है कि जिसका नाम सुनने में हिंदू जैसा है वह हिंदू ही होगा। उन्हें यह ध्यान नहीं रहता कि हिंदू होने के लिए हिंदू देवी-देवताओं के प्रति आस्था एवं श्रद्धा अनिवार्य है। वे जब किसी हिंदू जैसे नाम रखने वाले व्यक्ति को हिंदू-विरोधी क्रिया में संलग्न देखते हैं तो यह धारणा बना लेते हैं कि हिंदू ही हिंदू का सबसे बड़ा दुश्मन है! धर्म परित्याग कर भी अनेक हिंदू अपने हिंदू नाम का परित्याग नहीं करते। वे भेड़ की खाल ओढ़े रहकर, भेड़िए की ज़बान बोलना, अपने हित में पाते हैं। अधिकांशतः हिंदू इन्हें पहचान नहीं पाते। वे जब शर्मा नाम पढ़ते तो यही समझते कि जब हिन्दू स्वयं कह रहे हैं तो संभवतः उनकी बात सच ही होगी। **वे क्या जानते कि ये सभी हिन्दू-नामधारी घोर नास्तिक (कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट) हैं, जो श्री राम तो क्या, भगवान तक के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखते।** इर्फ़ान ने शर्मा को, और शर्मा ने अपनी टोली को बड़ी ख़ूबसूरती से चुना।

एक असत्य अपने आप में पर्याप्त नहीं होता

आरंभ से ही, दोनों पक्षों की सहमति से, ऐसा निश्चय किया गया था कि विहिप को, उनके प्रमाणों पर, बीमैक लिखित उत्तर देगी 10 जनवरी से पहले, पर उन्होने अभी तक यह किया नहीं था। उसके बाद और दो सप्ताह बीत चुके थे, 24 जनवरी को दोनों पक्ष मिले, अपने-अपने प्रमाणों पर बात करने के लिए। अब तो कम से कम उन्हें वह लिखित उत्तर देना था, पर नामी कॉम्युनिस्ट इतिहासज्ञ प्रॉफ़ेसर आर एस शर्मा ने इस बैठक में कहा, कि उन्हें और उनके साथियों को, विहिप के द्वारा प्रस्तुत किए गए

जिसका उत्साह से अनुकरण किया महमूद ग़ज़नवी, औरंगज़ेब व तालिबान ने। वास्तव में (पैग़ंबर) मुहम्मद का आचरण उस मापदंड को परिभाषित करता है जिसके आधार पर यह निर्णय किया जाता है कि कौन एक अच्छा मुसलमान है। अर्थात अच्छा मुसलमान वही है जो मुहम्मद का पूरी तरह अनुसरण करता है" संदर्भ कोएनराड एल्स्ट, पृ 60-61

ठग रहा है वह अपने आप को, जो अनदेखा करे इतिहास को। इतिहास वो दर्पण है जिसमें चाहे तो देख सकते हैं हम, अपने आने वाले कल की छवि। न भूलें कि इतिहास अपने आप को सदियों से दोहराता रहा है।

बाकी विश्व में आज क्या हो रहा है

डॉ कोएनराड एल्स्ट हमें यह भी बताते हैं कि आज दुनिया भर में, ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, अमरिका में, वहाँ की सरकारें और वहाँ के न्यायाधीश, वहाँ के आदि-निवासियों के अपने धार्मिक स्थानों पर उनके पूजा करने का अधिकार स्वीकार कर रहे हैं (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 188)। **तो फिर हमारे न्यायाधीश, हमारे बुद्धिजीवी, हमारे समाचार पत्र एवं हमारी सरकार इससे कतराती क्यों हैं? क्या उन्हें सच्चाई मालूम नहीं? या वे जान बूझकर सच्चाई से मुख मोड़े रहना चाहते हैं? क्या ये सभी उसी ईसाई-अंग्रेज़ी शिक्षा पद्धति की पैदावार नहीं है जो उन्हें बचपन से धीरे-धीरे अ-हिंदू या/एवं हिंदू-विरोधी बनाने में सतत प्रयत्नशील रहती है? यह बिसात इतनी खूबसूरती से बिछाई जाती है कि उन्हें इस बात का इल्म (ज्ञान) तक नहीं होता कि उन्हें क्या से क्या बनाया जा रहा है। चन्द्रशेखर सरकार जिसने कुछ चेष्टा की इस दिशा में कि हिंदुओं को न्याय मिले उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर, उसे शीघ्र ही गिरा दिया गया। अधर्म के पक्षधर कभी भी धर्म के पक्षधरों को अधिक समय तक अपने पाँवों पर खड़े रहने नहीं देते क्योंकि उन्हें सर्वदा इस बात का भय लगा रहता है कि कहीं धर्म के पक्षधर शक्तिशाली हो गए तो वे अधर्म का अस्तित्व मिटा देंगे। अतः धर्म के पक्षधरों के हित में यही होगा कि वे कभी भी अधर्म को अनदेखा न करें। यदि**

भ्रमणकारी जिसने सूरत से लेकर दिल्ली तक भ्रमण किया, लिखते हैं "सूरत से दिल्ली तक उन्हें एक भी हिंदू मंदिर नहीं दिखाई दिया" संदर्भ एम वी कामथ, पृ 4

1,000 किलोमीटर और एक भी मंदिर नहीं। क्या हुआ मंदिरों का? क्यों हुआ ऐसा? क्योंकि कुरान यही हिदायत देता है हर मुसलमान को कि वह मंदिर तोड़े

कुरआन सूरह 2 आयत 193 एवं सूरह 8 आयत 39 का भावार्थ "तब तक जारी रखो लड़ाई उनसे जब तक मूर्तिपूजा का नामों निशा न मिट जाए और इस्लाम सर्वत्र न फैल जाए" सूरह 60 आयत 4 का भावार्थ "दुश्मनी और घृणा का बोलबाला रहेगा हमारे और उनके बीच तब तक, जब तक वे सभी केवल अल्लाह में ही विश्वास न करने लगें अर्थात तब तक, जब तक उन्हें जबरन मुसलमान न बना दिया जाए" उद्धृत डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 165

और क्योंकि पैग़ंबर मुहम्मद ने स्वयं मंदिर तोड़े और जो उन्होने किया वह सुन्ना बन गया जिसका अनुसरण करना हर मुसलमान के लिए एक कानून बन गया

सुन्ना का अर्थ है "मुसलमानों का कानून जो कि मुहम्मद की कथनी और करनी के आधार पर बना है और जिसे आधिकारिक/प्रामाणिक माना जाता है (कुरान के साथ)" संदर्भ निउ ऑक्स्फ़ोर्ड डिक्शनरी ऑफ़ इंग्लिश, पृ 1861

"जब तक पैग़ंबर मुहम्मद घटनास्थल पर नहीं उभरे, तब तक अरब राष्ट्र था ऐसा जहाँ अनेक संस्कृतियाँ पल रहीं थी साथ-साथ - मूर्तिपूजक मंदिर, ईसाई गिरजाघर, यहूदी प्रार्थना भवन, पारसी अग्नि मंदिर। जब वह मरे तब तक सारे गैर मुसलमान या तो (बलपूर्वक) मुसलमान बना दिए गए थे, या फिर अरब देश से बाहर निकाल दिए गए थे, या मार डाले गए थे और उनके पूजा के स्थल बरबाद कर दिए गए थे या फिर वे मस्जिद में बदल दिए गए थे। वस्तुतः सबसे निर्णायक घटना थी पैग़ंबर का प्रवेश काबा में, जो था अरब मूल निवासियों के धर्म का प्रमुख मंदिर, जहाँ उन्होने एवं उनके भतीजे अली ने अपने ही हाथों से 360 मूर्तियों को तोड़ा। इस्लाम का अपना बयान ही हमें बताता है कि उनके आदर्श व्यक्ति पैग़ंबर मुहम्मद ने अपवित्र किया काबा को और उसे मस्जिद में बदल दिया ----इस प्रकार एक उदाहरण प्रस्तुत किया

प्रमाणों को अध्ययन करने का समय ही नहीं मिला। यहाँ दो बातें ध्यान देने के योग्य हैं। **पहली कि यह टालमटोल की नीति।** समय पर (10 जनवरी) उत्तर न देना। उसके बाद और समय बीतने देना। बाद में (24 जनवरी) कहना कि हमें आपके प्रमाणों को पढ़ने का समय ही नहीं मिला, इतने व्यस्त थे हम! **पर दूसरी बात इससे भी कहीं अधिक संगीन थी जिसमें साफ़ बेईमानी झलकती है, सुनिए उसकी कहानी।** 24 जनवरी को जिस दिन उन्होने बैठक में कहा कि हमें आपके प्रमाणों को देखने का समय तक नहीं मिला, **उसके एक सप्ताह पहले ही** इसी प्रॉफ़ेसर आर एस शर्मा ने अपने 41 इतिहासज्ञ साथियों के **हस्ताक्षर के साथ** एक वक्तव्य जारी किया था, जिसका उन्होने बहुत **ज़ोर-शोर से प्रचार** करवाया था। उन सभी इतिहासज्ञों ने उस वक्तव्य में भारत की जनता को यह बताया था कि **निश्चित रूप से, अवश्य ही, कहीं भी, कोई भी, प्रमाण नहीं है** कि उस स्थान पर मस्जिद के पहले कोई राम-मंदिर हुआ करता था। इसी बात पर प्रॉफ़ेसर आर एस शर्मा ने "राम के अयोध्या का सांप्रदायिक इतिहास" (अँग्रेज़ी में) नाम की एक छोटी पुस्तक भी छपवाई थी (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 152)। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि यदि शर्मा एवं 41 इतिहासज्ञों ने विहिप के दिए हुए **प्रमाण पढ़े नहीं थे, तो किस आधार पर** ज़ोर-शोर से प्रचार कर उन्होने जनता को बताया था कि निश्चित रूप से, अवश्य ही, कहीं भी, कोई भी, प्रमाण नहीं है कि उस स्थान पर मस्जिद के पहले कोई राम-मंदिर था? इसी प्रश्न का दूसरा पहलू यह है कि यदि वे इतने अधिकार के साथ कह सकते थे कि निश्चित रूप से, अवश्य ही, कहीं भी, कोई भी, प्रमाण नहीं है कि उस स्थान पर मस्जिद के पहले कोई राम-मंदिर था, तो फिर 24 जनवरी की बैठक में उन्होने यह बहाना क्यों प्रस्तुत किया **कि हम बहस के लिए तैयार नहीं हैं?** कौन सा उनका असली झूठ था? यह कि निश्चित रूप से, अवश्य ही, कहीं भी, कोई भी, प्रमाण नहीं है कि उस स्थान पर मस्जिद के पहले कोई राम-मंदिर था, या कि **इस वक्तव्य को जारी करने के बहुत पहले** आपने हमें जो प्रमाण अध्ययन करने के लिए दिए थे हमने उन्हें पढ़े तक नहीं?

उन्होंने ऐसा क्यों किया

वे जानते थे कि जनता के मन में घर कर जाएगी वह बात जो पहले एक बार ज़ोर-शोर से प्रचारित की गई, और जनता उसे ही याद रखेगी। आगे बैठक में क्या हुआ इस बात की जनता को कोई भनक तक न होगी क्योंकि **समस्त बड़े समाचार पत्र उसे छापेंगे ही नहीं।** यह एक सोची समझी साज़िश थी। अगली बैठक निश्चित की गई अगले दिन 25 जनवरी के लिए। **पर बीमैक के इतिहासज्ञ आये ही नहीं।** उन्होने न तो ऐसे कोई लिखित प्रमाण उपस्थित किए जो दर्शाते हों कि राम मंदिर वहाँ कभी नहीं था, न ही उन्होने कोई लिखित खंडन दिया विहिप के प्रमाणों का, न ही उन्होने उपलब्ध प्रमाणों पर आमने-सामने बैठ कर चर्चा की, वे इन सबसे दूर ही रहे। इस प्रकार से भारत सरकार की चेष्टा व्यर्थ गई, एक समाधान खोजने की, उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर, आपसी चर्चा से (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 153)। आप देख रहे हैं कि यह एक सोची समझी चाल का नतीजा है। **जब प्रमाणों की बात आए तो पीछे हट जाओ। पर साथ ही बड़े समाचार पत्रों का सहारा लेकर झूठ को फैलाओ ताकि जनता झूठ को ही सच्चाई जाने, और ऐसा ही माने।**

अब बड़े समाचार पत्रों का भी चरित्र देख लीजिए

डॉ कोएनराड एल्स्ट के शोधों से हमें पता चलता है, कि जब जन-सभा में यह प्रश्न पूछा गया कि इतिहासज्ञों के वाद-विवाद का क्या परिणाम हुआ, तो प्रॉफ़ेसर इर्फ़ान हबीब (अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के इतिहासज्ञ) और सुबोध कांत सहाय (जो उस समय गृह मंत्री थे) ने कहा कि विहिप वाले भाग गए वाद-विवाद से। और उनकी समाचार पत्रों के साथ मिलीभगत देखिए, सभी बड़े समाचार पत्रों ने इस सरासर झूठ का खंडन **छापने तक से मना कर दिया** (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 170)। **जनता को झूठ की जानकारी दी गई और सच को दबा दिया गया। यह है चरित्र हमारे बड़े समाचार पत्रों का। यह चरित्र उस ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा पद्धति की देन है जहाँ हम अपने बच्चों को भेजने में बड़ा गर्व अनुभव करते हैं।** समस्या को समस्या के रूप में

मस्जिदों को जिन्हें इन मूर्तिपूजक हिंदुओं के मथुरा, बनारस व अवध के मंदिरों को तोड़ कर बनाया गया है" संदर्भ डॉ एन एस राजाराम, पृ 96-97 उद्धृत मिर्ज़ा जान

इन बातों से क्या यह स्पष्ट नहीं होता कि श्री राम का मंदिर था वहाँ? सौ वर्षों से अधिक समय बीत चुका है, हिंदू शांति प्रिय ढंग से माँग करते रहे हैं उस जमीन की, ताकि वहाँ श्री राम का एक भव्य मंदिर बना सकें

"1885 में महंत रघुबंस दास ने फ़ैज़ाबाद न्यायालय में एक मुकदमा दायर किया कि वह स्थान जो हमारे पूज्य श्री राम के जन्म का स्थान था, उस पर बलपूर्वक और अन्याय से यवन आताताियों ने कब्जा जमा लिया था, अतः अब यह न्याय की माँग होगी कि वह स्थान हिंदुओं को दे दिया जाये" संदर्भ एम वी कामथ, पृ 4

सोच कर देखिए कल यदि एक लुटेरे ने ज़बरदस्ती आपकी संपत्ति छीन ली तो क्या आज आप न्यायालय में जाकर न्याय नहीं माँग सकते, कि आप को आपकी संपत्ति वापस कर दी जाए? यही तो किया था हिंदुओं ने। और किस लिए होते हैं न्यायालय? किस लिए होती है सरकार? ताकि न्याय करे - ऐसा ही न? प्रजा राजा के पास न जाएगी, तो कहाँ जाएगी?

फ़ैज़ाबाद के ज़िला-जज ने 16 मार्च 1886 को अपना निर्णय सुनाते हुए कहा "कल मैं स्वयं दोनों पक्षों के लोगों के साथ उस स्थल पर गया...यह बड़े दुर्भाग्य की बात है यह मस्जिद ऐसी जगह पर बनाई गई जो हिंदुओं के लिए इतना पवित्र स्थान रहा है" संदर्भ कामथ, पृ 4 एवं डॉ एल्स्ट, पृ 161

यह सब क्यों हुआ इसे नहीं समझेंगे तो यही सब फिर से दोहराया जाएगा

अपने अतीत को अनदेखा न करें क्योंकि अतीत के गर्भ से ही वर्तमान जन्म लेता है और यही वर्तमान हमारे भविष्य को दिशा देता है। 18वीं शताब्दी में, एक ब्रिटिश

मस्जिद...वहाँ दो शिलालेख हैं, एक बाहर और एक प्रवचन मंच पर, दोनों पर तारीख़ें खुदी हैं 935 ए एच (अल हिज़्र) - संदर्भ एम वी कामथ, पृ 4

गिरीश मुंशी के एक अप्रकाशित शोध के अनुसार स्वयं मुसलमान विद्वानों के लेखों में अनेक प्रमाण मिलते हैं जो इस बात के साक्षी हैं कि श्री राम का मंदिर ध्वंस किया गया था। उनके नाम हैं - मिर्ज़ा जान, मुहम्मद असघर, मिर्ज़ा रज़ाब अली बेग सुरूर, शेख़ मुहम्मद ज़हमत अली काकोर्वी नामी, हाजी मुहम्मद हुसैन, मौलवी अब्दुल करीम, अल्लामा मुहम्मद नज़मु घानी और मुंशी मौलवी हशमी। इसके अलावा कई यूरोपियन (इतिहासकारों) के नाम भी हैं (जो इस बात की पुष्टि करते हैं) - विलियम फिंच, ज़ोजेफ टाइफ़ेन्थालेर, मॉन्टगोमरी मार्टिन, एड्वर्ड थॉर्नटन और हांस बैकेर - एम वी कामथ, पृ 4

“19वीं शताब्दी के मिर्ज़ा जान अपनी ऐतिहासिक पुस्तक हदिकाह-ए-शुहादा में लिखते हैं - जहाँ भी उन्हें हिंदुओं के भव्य मंदिर मिले...वहीं मुस्लिम सुलतानों ने मस्जिद व सराय बनाए, इस्लाम को बहुत ही उत्साह के साथ फैलाया और काफ़िरों (मूर्तिपूजक हिंदुओं) का दमन किया। इस प्रकार से उन्होनें फ़ैज़ाबाद एवं अवध (अयोध्या) को भी इस नारकीय गंदगी से साफ़ कर दिया क्योंकि यह उनकी पूजा का एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान हुआ करता था एवं राम के पिता की राजधानी। वहाँ जहाँ एक बहुत भव्य मंदिर (राम जन्म स्थान का) हुआ करता था, वहीं उन्होने एक बड़ा मस्जिद बनवाया...क्या आलीशान मस्जिद बनवाया सुलतान बाबर ने! ” संदर्भ डॉ राजाराम, पृ 96 उद्धृत मिर्ज़ा जान

औरंग ज़ेब की पौत्री 1707 ईस्वी में सहिफ़ा-ए-चिहल नासाएह बहादुरशाही में लिखती हैं “इस्लाम की फ़तह को नज़र में रखते हुए सभी कट्टर मुस्लिम सुलतानों को चाहिए कि वे इन मूर्ति पूजकों को अपनी अधीनता में रखें, जिज़िआ (हिंदुओं पर लगाया गया धार्मिक कर) वसूल करने में जरा भी ढील न दें, हिंदू राजाओं को जरा भी छूट न दें ताकि वे खड़े रहें अपने पैरों पर मस्जिद के बाहर तब तक जब तक ईद की नमाज़ न ख़त्म हो...शुक्रवार व सामूहिक नमाज़ों के लिए लगातार प्रयोग में लाते रहें उन

देखना पर्याप्त नहीं, हमें उसकी जड़ तक पहुँचने की आवश्यकता है। अपनी आने वाली पुस्तकों में हम इस समस्या के जड़ तक आपकी यात्रा कराएँगे, धीरे-धीरे एक-एक कदम लेकर। **अधर्म जब फैलता है चारों तरफ़ तो घोर अँधेरा कर देता है। तब आवश्यकता होती है किसी अर्जुन की जो अधर्म का नाश करे।**

झूठ के पुलिंदों को ढाँकने के लिए चोरी की भी तो आवश्यकता होती है

डॉ कोएनराड एल्स्ट हमें यह भी बताते हैं कि कम से कम चार बार विहिप के विद्वानों ने बीमैक के विद्वानों को **प्रमाण छुपाते या प्रमाण नष्ट करते हुए पकड़ा।** ये वे अवसर थे जिन पर ये चोरियाँ पकड़ी गई। कितनी और ऐसी चोरियाँ जो पकड़ में नहीं आईं उनका हमें ज्ञान तक नहीं। इन चार पकड़ी गई चोरियों का खंडन बीमैक के विद्वानों ने नहीं किया। न ही बीमैक के विद्वानों ने ऐसा कोई आरोप विहिप के विद्वानों पर लगाया (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 17-18)। इससे स्पष्ट होता है कि जहाँ एक तरफ़ विहिप के विद्वानों को चोरी का सहारा लेना नहीं पड़ा **क्योंकि सच्चाई उनके साथ थी,** वहीं दूसरी तरफ़ बीमैक के विद्वान बार-बार झूठ और चोरी का सहारा लेते रहे, अपनी झूठी बुनियाद को छुपाए रखने के लिए। **सभी बड़े समाचार पत्रों ने भी उनका भरपूर साथ दिया। क्या सब बिक गए थे? अरब देशों का अपार धन और कब काम आता?**

डॉ एन एस राजाराम अपनी पुस्तक ए हिंदू विउ ऑफ़ द वर्ल्ड--एस्सेज़ इन द इन्टेलेक्चुल क्षत्रिय ट्रडिशन (प्रकाशक वॉयस ऑफ़ इंडिया, नई दिल्ली, 1998) में लिखते हैं - अयोध्या बहस ने हिंदुओं में एक ऐतिहासिक बोध को जगाया। अतः अब यह कुछ समय की ही बात है कि (अपने आप को) धर्मनिरपेक्ष (कहने वाले) इतिहासज्ञों के द्वारा तैयार किए गए जाली इतिहास का भाँडा फूट जाएगा। उनकी जीविका एवं प्रतिष्ठा अब दाँव पर लगी है। राजनयिक व शासकीय स्वार्थों के प्रश्रय की वजह से, इन पुरुष और इन स्त्रियों ने अनेक वर्षों से वह मान्यता, पद एवं विशेष

सुविधाएँ भोगीं, जो उनकी योग्यताओं की तुलना में असाधारण रूप से अधिक थीं। उससे भी बुरी बात यह है कि उन्होने अपने राजनीतिक उद्देश्यों एवं पेशे गत स्वार्थों की उन्नति के लिए इतिहास में बड़ी मात्रा में जालसाज़ियाँ की। आज दाँव पर लगी है इन पुरुषों और इन स्त्रियों की न सिर्फ़ जीविका और प्रतिष्ठा बल्कि एक साधारण मानव के रूप में उनकी पहचान भी। यह स्वीकार करना कठिन होता है कि हम असत्य के आधार पर जीते रहे थे, उससे भी कठिन होता है यह स्वीकार करना कि हमने अपनी जीविका की नींव रखी थी झूठ पर (उद्धृत पृ 91-92)।

काश यह स्थायी हो पाता! पर, केन्द्र में सरकार बदल गई और यही लोग पुनः आ गए तथा आई-सी-एच-आर एवं एन-सी-ई-आर-टी दिल्ली (नैशनल काउन्सिल ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च ऐण्ड ट्रेनिंग अर्थात् राष्ट्रीय शैक्षणिक खोज एवं प्रशिक्षण परिषद्) जैसी केन्द्रीय संस्थाओं पर एक बार फिर से कुण्डली मार कर बैठ गए। साथ ही पुनः आरम्भ हो गया ऐतिहासिक जालसाजियों का वही पुराना दौर। **आज हमारे समाज में बौद्धिक बेईमानी इतनी बढ़ गई है क्योंकि इन्हें उचित सजा का प्रावधान ईसाई-अँग्रेज़ों द्वारा हम पर थोपे हुए आधुनिक न्यायशास्त्र में नहीं है।** जब समाज के कर्णधार ही बेईमानों की जात होगी तो बाकी प्रजा कैसी पैदा होगी? **जब ऐसे कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट प्राध्यापक एवं प्राध्यापिकाएँ ही बेईमानों के सरताज होंगे तो उनके पद चिह्नों पर चलने वाले छात्र-छात्राएँ कैसे बनेगें?**

एक ज्वलंत उदाहरण आपके सामने

अब उनके पद चिह्नों पर चलने वाली एक आदर्श छात्रा का उदाहरण देखिए। प्रॉफ़ेसर मंजरी काट्ज़ू तुलना करतीं हैं श्री राम की हिटलर व मुसोलिनी से (संदर्भ - पुस्तक समीक्षा, द फ़्री प्रेस जरनल में प्रकाशित, मुम्बई संस्करण, 30 मार्च 2003, स्पेक्ट्रम पृष्ठ 6 स्तम्भ 3)

इस पर उन्हें मिलती है डॉक्टरेट की उपाधि। धन्य है वह विश्वविद्यालय जिसने दी उपाधि उनको डॉक्टर की, बनाया उन्हें प्रॉफ़ेसर। उन्हें डॉक्टर की उपाधि देने वाले एवं

पाकिस्तान, चीन, इज़राएल की सरकारें तोड़ें मस्जिद और कोई कुछ न कहे, पर हम हैं तुम्हारे साथ। हमारा सहारा लो, बरसों पुरानी बात न भूलो, बस लड़ते रहो और हमें हमदर्द मान, अपना वोट देते रहो। क्या वे सफल रहीं अपनी इस चेष्टा में? हाँ, 2004 के इलेक्शन में देश की बागडोर उनके हाथ में आ गई।

क्या व्यर्थ ही बहा था एक लाख अस्सी हजार हिंदुओं का लहू

हैमिल्टन ने लिपिबद्ध किया - बाबरी मस्जिद बना था गारे के साथ हिंदू मृतकों के रक्त और चर्बी से (संदर्भ - एम वी कामथ, पृ 4)। श्री राम जन्मभूमि मंदिर के बारे में गिरीश मुंशी लिखते हैं - दो फ़क़ीरों के उकसाने पर बाबर ने अपने सेनापति को आक्रमण करने के लिए कहा। सेनापति का विरोध किया हंसबर के राजा विजय सिंह ने, मकरियाह के राजा संग्राम सिंह ने और भिटी के राजा मोहबत सिंह ने (संदर्भ - एम वी कामथ, पृ 4)। ब्रिटिश इतिहासज्ञ कन्निंघम लिखते हैं - हिंदुओं ने एक जुट होकर सामना किया अपने श्री राम जन्मभूमि मंदिर के लिए। 1 लाख 80 हज़ार हिंदू मारे गए। मुसलमान मृतकों की संख्या उपलब्ध नहीं। अंत में मीर बाकी ने मंदिर को अपने तोप से उड़ा दिया (संदर्भ - एम वी कामथ, पृ 4)। **जिन मुस्लिम फ़क़ीरों सूफ़ी संतों को आजकल बड़ी गरिमा प्रदान की जाती है हमारी मीडिया के द्वारा, उन्हीं सूफ़ी फ़क़ीरों का ज़िक्र आपको अक्सर मिलेगा हिंदू मंदिरों को तुड़वाने में सक्रिय भूमिका निभाते हुए। आज अधर्मियों का प्रभाव इतना बढ़ गया है कि हर वह व्यक्ति या घटना जो हिंदू धर्म का नाश कर सके उसे गरिमा प्रदान करने की अथक चेष्टा की जाती है।**

आइये अब कुछ ऐतिहासिक तथ्यों पर नजर डालें

अँग्रेज़ प्रशासक एच ई नेविल ने गेज़ेट में लिपिबद्ध किया “1528 ईस्वी में बाबर अयोध्या में आया और एक सप्ताह ठहरा। उसने ध्वंस कर दिया उस प्राचीन मंदिर को (जो राम के जन्मस्थान की पहचान कराता था) और उसके स्थान पर बनाया एक

पश्चात्, उलुघ ख़ान के आक्रमण के बाद। ऐसा लगता है कि दुकानदार, व्यापारी, नाविक और इस्लाम के धर्मप्रचारक संतुष्ट नहीं थे उससे, जो संरक्षण मिलता रहा उन्हें, हिंदू राजाओं के शासन-काल में। वे प्रतीक्षा करते रहे उस दिन की जब यह दार अल-हर्ब बन जाएगा दार अल-इस्लाम। दार अल-हर्ब है काफ़िरों का वह राष्ट्र जिसके ख़िलाफ़ हर मुसलमान लड़ने को बाध्य है (कुरान और हदीस के अनुसार)। दार अल-इस्लाम है मुसलमानों का अपना वतन (संदर्भ - श्री सीता राम गोयल, पृष्ठ 35-36)। बर्मा के बौद्धों ने ढेरों मस्जिद एवं मदरसे तोड़े। उदाहरण के लिए (1) क्याइक्डोन - मस्जिद के अंदर का भाग व मुस्लिम स्कूल तोड़ा एवं मुसलमानों को निकाल दिया यदि उन्होने बौद्ध धर्म स्वीकार न किया (2) गॉ बे - मस्जिद तोड़ा (3) नॉ बू - मस्जिद तोड़ा और सारे गाँव वालों को निकाल दिया (4) डे न्गा इन - मस्जिद तोड़ा (5) क्याउंग डॉन - मस्जिद तोड़ा पर गाँव वालों को रहने दिया (6) कनिन्बू - मस्जिद व मुस्लिम स्कूल तोड़ा (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। **कहते हैं कि बौद्ध धर्म बड़े शांति और अहिंसा का धर्म हुआ करता है!** इज़राएल सरकार ने नाज़ारेथ में मस्जिद की नींव तुड़वा दी कारण यह मस्जिद ईसाइयों के धार्मिक स्थान के बहुत पास था जिससे ईसाइयों और मुसलमानों में तनाव बढ़ता जा रहा था (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। ईसाई पोप नाज़ारेथ में मस्जिद तुड़वाने का समर्थन करते हैं पर अयोध्या की घटना पर हिंदुओं की भर्त्सना करते हैं। **क्या न्याय ईसाई के लिए अलग और हिंदू के लिए अलग होता है? यह कैसे धर्म गुरु हैं? यह कैसा धर्म जिसका आधार न्याय न हो?** जब बाबरी ढाँचा गिरा तब से अनेक वर्ष बीत चुके हैं। उसके बाद भी विश्व के अन्य स्थानों पर कितने ही वास्तविक मस्जिद तोड़े गए। पर आज 25 जुलाई 2003 के समाचार पत्र (संदर्भ - द फ्री प्रेस जर्नल, मुंबई संस्करण, प्रथम पृष्ठ) बताते हैं, कि हमारी सोनिया गांधी कहती हैं, कि जब तक बाबरी मस्जिद तोड़ने वालों को दंड नहीं मिल जाता तब तक हम चैन से नहीं बैठेंगे और हमारा युद्ध चलता ही रहेगा। अर्थात वे चाहती थीं कि लोग न भूल पाएँ इस झगड़े को। वे चाहती थीं कि लोग लड़ते रहें इस बात पर। वे हवा देना चाहती थीं इस समस्या को जो बरसों पहले बीत चुका था। उन्हें क्या मिलता इससे? मुसलमानों के वोट। वे बता रहीं थीं मुसलमानों को कि हम हैं तुम्हारे एकमात्र हमदर्द। चाहे सउदी अरब के मुसलमान तोड़ दें मस्जिद, चाहे

उन्हें प्रॉफ़ेसर बनाने वाले भी तो ये प्राध्यापक एवं प्राध्यापिकाएँ ही हैं **जिन्होंने झूठ विरासत में पाई है और जो झूठ बाँटते फिरते हैं। इस प्रकार से उनकी फ़सलें बढ़ती जाती हैं -- एक पीढ़ी के बाद दूसरी पीढ़ी तैयार होती रहती है। सोचिए क्या होगा, आप के बच्चों का, जो सीखेंगे उनसे** कि हमारे श्री राम थे, एक जानवर उस हिटलर अथवा मुसोलिनी की तरह। और यह मंजरी काट्ज़ू हैं कौन? इनके दादाजी हुआ करते थे अध्यक्ष विश्व हिंदू परिषद् के। वही विश्व हिंदू परिषद् जो श्री राम मंदिर के लिए लड़ने को बना था! क्या बीती होगी उन पर? क्या उन्होने सोचा होगा कि एक दिन ऐसे भी नमूने पैदा होंगे उनके वंश में? **दोष वंश का नहीं, दोष शिक्षा का है और हमारी चाहत का। हम भेज देते हैं अपने बच्चों को ईसाई स्कूलों में और फिर दिल्ली के जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय जैसे कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्टों के गढ़ में।** ईसाई और नास्तिक कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट उन्हें सिखाएँगे क्या? यही तो सीखेंगे, जो सीखा है हमारी प्यारी मंजरी काटज़ू ने!

धर्म निरपेक्षता का यह आडम्बर

कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट को आसानी से पहचानना मुश्किल है। नेहरू ने उसे एक नया नाम दे दिया था धर्मनिरपेक्ष क्योंकि उसके पास अपना कोई धर्म न था और वह अपने को शिक्षा से ईसाई, रुचि से मुसलमान, दुर्घटना से हिन्दू कहता था। ऐसे व्यक्तियों का एकमेव धर्म होता है सत्ता एवं उस सत्ता के द्वारा हासिल की गई शोहरत, धन एवं वह सब कुछ जिसका वह हकदार न रहा हो। **धर्मनिरपेक्षता की आड़ में कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट बुद्धिजीवी हिंदू समाज के ब्राह्मण की छवि को सतत मलिन करने की चेष्टा में लगा रहा, कारण उसे स्वयं हिंदू समाज में ब्राह्मण के स्थान पर अधिकार जमाना था।** हिंदू समाज में ब्राह्मण हुआ करता था अन्य वर्णों का अध्यापक एवं दिग्दर्शक। उसी स्थान की होड़ में परोक्ष रूप से लगे रहे हैं, ये आज के कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट बुद्धिजीवी एवं कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट प्राध्यापक-प्राध्यापिकाएँ। **यही कारण रहा है कि वे हर एक उस कोशिश में लगे रहते हैं, कि किस प्रकार से ब्राह्मण का स्थान हिंदू समाज में एक अवांछित स्थान बना दिया जाए----ईसाई मिशनरी सेंट**

ज़ेवियर ने आरंभ की थी यह प्रक्रिया 16वीं शताब्दी में जिसको अन्जाम दिया ईसाई-अँग्रेज़ी सरकार ने एवं उनके आरक्षण में पल रहे ईसाई मिशनरी स्कूलों ने। जब वे गए तो छोड़ गए अपने औलाद नेहरू जैसे अनेक। इस प्रक्रिया को पूरे ज़ोर-शोर से आगे बढ़ाया 20वीं शताब्दी के कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट बुद्धिजीवियों ने। कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट बुद्धिजीवी कहता है अपने आप को धर्मनिरपेक्ष, पर वह है नहीं धर्मनिरपेक्ष। यह उसका मुखौटा है। भगवान को वह मानता नहीं। हिंदू को वह अपना सबसे बड़ा शत्रु मानता है पर स्पष्ट रूप से कहता कभी नहीं। इस कारण हम नहीं जान पाते कि वह प्रत्येक नई पीढ़ी को कैसे थोड़ा और हिंदू-विरोधी बनाता जाता है। जो बनता है वह स्वयं भी नहीं जानता कि अंदर ही अंदर वह धीरे-धीरे कितना हिंदू-विरोधी बनता जा रहा है। कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट बुद्धिजीवी होने के लिए यह आवश्यक नहीं कि आप कॉम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य हों। आपकी सोच कॉम्युनिस्ट हो, इतना ही पर्याप्त है। **यही सोच पहले आपको अहिंदू बनाता है और जैसे-जैसे इस सोच का प्रभाव आपके मानसपटल पर गहरा होता जाता है, त्यों-त्यों आप अधिकाधिक हिंदू विरोधी बनते जाते हैं।**

आप संभवतः लक्षणों को नहीं पहचान पाते

आप उन्हें कॉम्युनिस्ट की ज़बान में बोलते हुए नहीं पाते। उदाहरण के लिए पूँजीपति, सामंतवादी और ऐसे शब्दों का सतत प्रयोग। इससे यह न मान बैठें कि उनकी सोच पर कॉम्युनिज़्म-मार्क्ससिज़्म का प्रभाव नहीं। **अपनी संतानों में हिंदू देवी-देवताओं के प्रति अविश्वास या उलाहना की भावना को देखिए। आप इसे अनदेखा करते जाते हैं। आप यह सोच कर अपने आप को सांत्वना दे लेते हैं कि आज ये बच्चे हैं, कल जब बड़े होंगे तो जीवन के थपेड़े स्वयं इन्हें धर्म एवं ईश्वर को मानना सिखा देंगे।** सभी धर्म भगवान को किसी न किसी रूप में मानते हैं। एक कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट है जो भगवान के अस्तित्व को नहीं मानता। हमारे देश में ये अपने आप को कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट न कहकर धर्मनिरपेक्ष कहते हैं, क्योंकि यह शब्द सुनने में अधिक आदरणीय लगता है। धर्मनिरपेक्ष कह कर ये यह जताना चाहते हैं कि वे धार्मिक सोच

मस्जिद का अर्थ है नगर की सबसे बड़ी एवं पुरानी मस्जिद जहाँ नमाज़ पढ़ी जाती है (संदर्भ - डॉ हरदेव बाहरी, पृष्ठ 300)। यहाँ हम देखते हैं कि धन जामा-मस्जिद से अधिक महत्वपूर्ण हो सकता है औरंगज़ेब जैसे कट्टर मुसलमान के लिए, पर एक ढाँचा जो 57 वर्षों से मस्जिद न रहा था, वह श्री राम के जन्मस्थान से अधिक महत्वपूर्ण हो गया, इन न्यायाधीशों के लिए, इन मीडिया के दिग्गजों के लिए, एवं इन राजनीतिज्ञों के लिए! **यह तो है उनका विवेक एवं उनका नीति ज्ञान जो है इस ईसाई-अँग्रेज़ी शिक्षा पद्धति की देन!** इब्न सऊद ने मदीना का प्रसिद्ध मस्जिद तोड़ा - 1920 में वहाबी शासन के इब्न सऊद ने मदीना का प्रसिद्ध ज़नत उल बाक़ी मस्जिद को तुड़वा दिया (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। मक्का और मदीना का नाम तो आपने सुना ही होगा हज़रत मुहम्मद के संदर्भ में। उस मदीना के प्रसिद्ध मस्जिद को तुड़वाना ग़लत नहीं था मुसलमानों की नज़रों में। **आज ये न्यायाधीश एवं मीडिया दिग्गज कहेंगे, चाहे उन्होंने ने सदियों पहले गलती की हो, हम तो उसे नहीं दोहरा सकते, पर वे नहीं झिझकेंगे नई ग़लतियाँ स्वयं करने से, जो आज वे कर रहे हैं, हिंदू समुदाय के प्रति, अपने सतत अन्याय से।** चीन की सरकार ने मस्जिद तोड़ा - 9 ऑक्टोबर 2001 - चीनी सरकार के काराकाश ज़िले के अधिकारियों ने डोएंग मस्जिद तुड़वा दिया क्योंकि वहाँ के मुसलमान तुर्किस्तान की माँग करने लगे थे (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। मुसलमान जहाँ भी रहते हैं उसे दार अल-इस्लाम (मुसलमानों का वतन) बनाने की उधेड़ बुन में लगे रहते हैं। आज कश्मीर व केरल में यही हो रहा है। धीरे-धीरे वे हिंदुओं को काट कर फ़ेंके दे रहे हैं। चीन में भी उन्होनें वही चेष्टा की। पर चीनी उनसे ज़्यादा उस्ताद थे, हम हिंदुओं की तरह भले मानुस नहीं। **हम भूल जाते हैं कि भला होना ही पर्याप्त नहीं, भले होने के पीछे ठोस कारण चाहिए। आवश्यकता से अधिक भला बनने की चाहत में हम अपना ही बुरा कर बैठते हैं।** उदाहरण प्रस्तुत है आपके सामने - सिद्धराजा जयसिम्ह एवं उनके उत्तराधिकारी, गुजरात में, मुसलमानों को रहने एवं इबादत (पूजा) के लिए संरक्षण देते रहे। गुजरात के अनेकों नगरों में, मुसलमानों की संख्या और उनकी मस्जिदें बढ़तीं रहीं, जिसके साक्षी हैं अनगिनत शिलालेख, ख़ासकर खम्बाट, जूनागढ़ और प्रभासपतन, जिन पर तारीख़ें खुदीं हैं 1299 ईस्वी के पहले की, जबकि गुजरात मुसलमानों के आधिपत्य में आया 1299 ईस्वी के

नहीं बल्कि एक ढाँचे को गिरा दिया तो अचानक हमारे न्यायाधीशों का अंतःकरण ग्लानि से भर गया! हमारे सर्वोच्च न्यायालय ने इसे 'राष्ट्रीय लज्जा' की बात कहकर हिंदुओं को इतनी फटकार दी, पर न्याय न दिया! 3,000 घंटे सोचने के बाद भी निर्णय न लिया। अपने वचन तक से मुक़र गए। **तब कहाँ खो गई थी उनके अंतःकरण की आवाज़? क्या केवल हम हिंदुओं ने ठेका ले रखा है सब बलिदान करने का?** ये न्यायाधीश जो हमें सीख देते हैं, उनके अपने आचरणों की झलक तो देखी ही है आपने इस पुस्तक में। जनवरी 2004 - पाकिस्तान के समाचार पत्र द डॉन ने लिखा कि सरकारी अधिकारियों ने एक बनते हुए मस्जिद को तुड़वा दिया क्योंकि वह स्थान एक उपवन के लिए रखा गया था (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। मुस्लिम राष्ट्र पाकिस्तान में एक उपवन, एक मस्जिद से अधिक महत्व का हो सकता है, पर हम हिंदुओं के राष्ट्र में वह ढाँचा, जो 57 वर्षों से मस्जिद न रहा, हमारे श्री राम के जन्मस्थान से अधिक महत्व का हो गया! यह सोच है हमारे आदरणीय(?) न्यायाधीशों की। क्या वे सब वास्तव में आदर के पात्र हैं? हमें संविधान न दिखाइए कि उसके अनुसार हम धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र हैं। वह संविधान जो इन्हीं हिंदू विरोधी लोगों ने लिखा, क्योंकि वे चाहते थे इस सनातन सत्य को झुठलाने की, कि **जब तक मानव समाज की याददाश्त जाती है तब से यह भारत देश रहा है एक हिंदू राष्ट्र।** कुछ अँग्रेज़ी पढ़े लिखे मकॉले-मुलर-नेहरु-पुत्रों और मुस्लिम-ईसाई-वोट के लोभी राजनीतिज्ञों की इच्छा से यह कुछ और नहीं बन जाएगा। यह रहेगा हिंदू राष्ट्र ही। **चाहे आपको शर्म आती हो यह कहने में, मुझे नहीं आती कि मैं हिंदू हूँ और यह मेरा देश है।** हिंदू राष्ट्र जिसने पनाह दी मुसलमानों को, ईसाइयों को, और उन्हींने आगे चल कर छुरा भोंका हम हिंदुओं की पीठ पर, और इतिहास भी गवाह है इसका। औरंगज़ेब जिसने हिंदू मंदिरों को तुड़वाने का प्रण ले रखा था, जिसके कारण 18वीं सदी में सूरत से लेकर दिल्ली तक एक भी हिंदू मंदिर न बचा था, उसी औरंगज़ेब ने स्वयं गोलकुंडा के जामा मस्जिद को तुड़वा दिया। वहाँ का जागीरदार कर (टैक्स) इकट्ठा करता रहा पर उसने उसे औरंगज़ेब के राजकोष में नहीं जमा कराया। उसने धन को ज़मीन में गाड़ दिया और उसके ऊपर एक आलीशान मस्जिद बनवा दिया। धन वसूल करने के लिए औरंगज़ेब ने जामा मस्जिद को तुड़वा दिया (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। जामा-

जैसी संकुचित मनोवृत्ति से ऊपर हैं! अब उनके आचरणों को गौर से देखिए, जिनके पीछे उनकी असली सोच झलकती दिखेगी। उनकी सोच में आपको सभी धर्मों के प्रति समभाव कभी न मिलेगा। **बहुधा बुद्धिजीवी, कलाकार, चलचित्र निर्देशक, लेखक, साहित्यकार, राजनीतिज्ञ, प्राध्यापक, इत्यादि होने के कारण उनकी बोली मँजी हुई होती है, पर बोली पर न जाएँ। उनके आचरण को देखें और उनकी सोच को पहचानें। ये आपकी संतानों को ग़लत रास्ते पर ले जा रहे हैं। जैसे-जैसे आपकी संतानें बड़ी होंगी, उनकी सोच और भी गहरी होती जाएगी। उनकी यह सोच फैलती जाती है, प्रभावित करती है अन्य लोगों को, अनेक माध्यमों से, उदाहरण के लिए -- पत्र-पत्रिकाएँ, टीवी सीरियल, सिनेमा, साहित्य, टीवी वार्तालाप एवं टीवी पर बहस, इत्यादि। अतः सोचें आपको क्या करना है।**

हिंदू ब्राह्मण की विडंबना

हिंदू ब्राह्मण को अपनी बेड़ियाँ काट कर एक बार फिर उठ खड़ा होना होगा। उसे हिंदू युवा वर्ग का शिक्षक एवं मार्गदर्शक बनना होगा। हिंदू क्षत्रिय को इसमें सहायता करनी होगी, वैसे ही जैसे श्री राम ने की थी विश्वामित्र की! आज हिंदू क्षत्रिय को उठ कर बेड़ियों में जकड़े ब्राह्मण को मुक्त कराना होगा, ताकि वह पुनः बन सके हिंदू समुदाय का शिक्षक एवं मार्गदर्शक। “यदि ब्राह्मण न होता तो मैं सारे हिंदुओं को ईसाई बना चुका होता”, ऐसा लिखा था सेंट ज़ेवियर ने सोसाइटी ऑफ़ जीसस को 16वीं सदी में। **समय गुज़रता गया, ज़ेवियर-पुत्रों ने ब्राह्मण को बेड़ियों में जकड़ दिया और आगे चल कर मकॉले-मुलर-नेहरु-पुत्रों ने ब्राह्मण के मुँह पर कालिख मल दी।** ब्राह्मण मुँह छुपा बैठा, ज़ेवियर-पुत्रों ने हिंदू को ईसाई बनाया और नेहरू-पुत्रों ने हिंदू को मार्क्ससिस्ट बनाया। **आज यदि हिंदू फिर से हिंदू बनना चाहे तो उसे ब्राह्मण को उसका खोया सम्मान दिलाना पड़ेगा।** हिंदू इतिहास हमें बताता है कि क्षत्रिय ही ब्राह्मण का रक्षक हुआ करता था - भूल गए श्री राम को? आज उस क्षत्रिय को अपना क्षात्र-धर्म निभाना होगा। यदि क्षत्रिय चूकेगा तो एक ब्राह्मण को परसा हाथ में लेकर एक बार फिर परशुराम बनना पड़ेगा। इस बार वह परशुराम क्षत्रियों का नहीं, बल्कि ज़ेवियर-पुत्रों एवं

मकॉले-मुलर-नेहरू-पुत्रों का संहार करेगा। **इस लिए हिंदू क्षत्रिय, तुम्हें भी आज जागना होगा, हिंदू मर्यादा की रक्षा के लिए, क्योंकि परसा उठाना ब्राहमण की मर्यादा को नष्ट करेगा।**

झूठ जिनकी विरासत है और जो झूठ बाँटते फिरते हैं

बहुत समय नहीं बीता। 24 दिसंबर 2002 को टाइम्स ऑफ़ इंडिया (मुंबई संस्करण) ने एक ख़बर छापी जिसमें उन्होने शीरीन रत्नागर को मुम्बई के **नामी पुरातत्वज्ञ** एवं जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के सेवानिवृत **पुरातत्व का प्रॉफ़ेसर** बताया। **शीरीन रत्नाकर ने पाठकों को विश्वास दिलाया कि अयोध्या में मस्जिद के पहले मंदिर होने के उपयुक्त पुरातात्विक (ख़ुदाई से उपलब्ध) प्रमाण नहीं हैं।** मैंने अगले ही दिन टाइम्स ऑफ़ इंडिया को लिखा, बहुत सारे पुरातात्विक प्रमाणों का उल्लेख कर, पर टाइम्स ऑफ़ इंडिया ने उसे नहीं छापा, न मेरे पत्र का कोई उत्तर दिया। मेरे मन में प्रश्न उठा, आख़िर टाइम्स ऑफ़ इंडिया का उद्देश्य क्या है? पाठकों तक सच्चाई को पहुँचाना, या उसे छुपाना और पाठकों के मन में वहम फैलाना? इसी प्रकार की कई और झूठ हमने टाइम्स ऑफ़ इंडिया को फैलाते देखा, जिनका विवरण हम अपनी अन्य पुस्तकों में देंगे उचित स्थानों पर। प्रत्येक बार हम उन्हें लिखते रहे और वे उसे अनदेखा करते रहे, उसके बाद हमने निर्णय लिया कि हम ऐसे समाचार पत्र को नहीं पढेंगे जो जान बूझ कर झूठ को फैलाता है और सच को दबाता है। प्रत्येक व्यक्ति जो ऐसे समाचार पत्र को ख़रीदता है वह एक मिथ्यावादी को परोक्ष रूप से सहायता करता है। अपने नाम और पद का लाभ उठाकर, शीरीन रत्नागर जैसे प्रॉफ़ेसर यदि साधारण जनता को गुमराह करते रहेंगे, तो जनता को एक दिन निर्णय लेने पर बाध्य होना पड़ेगा कि ऐसे प्रॉफ़ेसरों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए, क्योंकि ये विश्वविद्यालयों के प्रॉफ़ेसर सरकार के पैसों पर जीते है, जो जनता के कर से आता है, और जनता का खा कर ये निर्लज्ज जनता को गुमराह करते हैं। डॉ कोएनराड एल्स्ट लिखते हैं कि बाबरी मस्जिद के पक्ष वाले, ये अपने आप को धर्मनिरपेक्ष कहने वाले, अक्सर ख़ुदाई का विरोध करते रहे, जबकि हिंदू पक्ष बराबर इसकी माँग करता रहा (संदर्भ - डॉ

कहाँ खो गई उनके अंतःकरण की आवाज

हिंदुओं ने तो केवल नाम-मात्र के एक मस्जिद का ढाँचा गिराया था, वह भी वर्षों के अन्याय को चुप चाप सहते रहने के बाद - अन्याय जो यवनों ने किया, अन्याय जो राष्ट्र की स्वतंत्रता के पश्चात् धर्मनिरपेक्षता की आड़ में हमारे अपनों ने किया, अन्याय जो हमारी न्यायालयों ने किया अपनी अकर्मण्यता के द्वारा। एक नाममात्र का मस्जिद जहाँ पिछले 57 वर्षों से न तो नमाज़ पढ़ी गई न उसका मस्जिद के रूप में प्रयोग किया गया, अपितु पिछले 44 वर्षों से वह इमारत हिंदू मंदिर के रूप में प्रयोग में लाई जाती रही। उस ढाँचे को एक हिंदू मंदिर का उचित स्वरूप देने के लिए गिराया गया। **यह तो 1992 की पुरानी बात है, अब तुलना कीजिए इन तथ्यों की, निम्न लिखित सच्चाइयों से, जो उसके पश्चात् घटीं, मुस्लिम राष्ट्रों में जहाँ मुसलमानों ने एवं मुस्लिम सरकारों ने ऐसे मस्जिदों को ढहा दिया जहाँ तब भी नमाज़ पढ़ी जाती थी।** पूछिए इन मीडिया के दिग्गजों को एवं स्वनामधन्य बुद्धिजीवियों को कि **कहाँ खो गई उनके अंतःकरण की वह आवाज़** जिससे प्रेरित होकर उन्होंने हिंदुओं के विरुद्ध इतना जहर उगला था? 12 दिसंबर 2001 - कोसोवा की शिया न्यूज़ ने सूचना दी कि सऊदी वहाबी कर्मियों ने बुल्डोज़र लाकर ज़ाकोविका के मस्जिद व क़ुरान स्कूल को ढहा दिया (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। हमारे राम भक्तों ने तो जोश में आकर, सदियों के अन्याय का विरोध करते हुए, एक ढाँचे को गिराया जो मुस्लिमों के इबादत की जगह न रही थी, बल्कि हिंदुओं के पूजा का स्थान बन चुकी थी। पर यहाँ तो विश्व के सबसे कट्टर (सऊदी अरब के) मुसलमानों ने, स्वयं बुल्डोज़र लाकर, सोची समझी योजना के अनुसार, एक वास्तविक मस्जिद एवं मदरसे को तोड़ा! जून 2002 - दक्षिण-पूर्व एशिया के स्वाधीन सुलु की राजधानी जोलो के मुख्य मस्जिद को ढहा देने की आज्ञा दी वहाँ के राज्यपाल नूर मिसौरी ने। यह मस्जिद उस द्वीप-प्रदेश का ऐतिहासिक चिह्न हुआ करता था जहाँ अतीत एवं वर्तमान के सभी परंपरागत नेता एवं नए सरकारी अधिकारी अपने धार्मिक संगठन का कार्य प्रारंभ किया करते थे (संदर्भ - विशाल शर्मा, पृष्ठ 5)। यहाँ हम देखते हैं कि एक प्रमुख मुसलमान अधिकारी एक बहुत ही महत्वपूर्ण मस्जिद को तोड़ने से न झिझका। पर जब रामभक्तों ने मस्जिद

कभी नमाज़ न अदा की गई। जिस जगह पर 57 वर्षों से नमाज़ न अदा की जाए वह जगह मस्जिद नहीं रहती, वह एक स्मारक बन कर रह जाता है। 1949 में हिंदुओं ने उस खाली ढाँचे को, जिसे आज हमारे समाचार पत्र और राजनीतिज्ञ बाबरी मस्जिद कहते नहीं थकते, हिंदू मंदिर के रूप में उपयोग में लाना आरम्भ किया। **वह ढाँचा जिसे हम बाबरी मस्जिद कहते हैं और जो पिछले 44 वर्षों से एक मंदिर बना रहा, उसे मंदिर का आवरण देना स्वाभाविक ही होता।** इसीलिए हिंदू चाहते थे कि इस मस्जिदनुमा ढाँचे को, जो अब 57 वर्षों से मस्जिद न रहा, बल्कि 44 वर्षों से अब एक मंदिर बन चुका था, उसे मंदिर का चेहरा दिया जाए। **क्या दोष था इसमें?** (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 148-149)? बड़े समाचार पत्र जो जनमत तैयार करते हैं, क्या उनका यह कर्तव्य नहीं था कि वे इन तथ्यों को बार-बार जनता के सामने लाते कि अब वह मस्जिद न रहा था? इसके विपरीत, उन्होने जनता को बार-बार बाबरी मस्जिद का नाम लेकर यह एहसास दिलाया कि वह मस्जिद (इबादत की जगह अर्थात पूजा का स्थान) ही था। उसे बाबरी मस्जिद कहते-कहते हमारे समाचार पत्रों ने जो छवि सबके मन में आँकी है, वह है एक मस्जिद की, जिसे ढहा दिया हिंदुओं ने। **पूछिए इन बड़े-बड़े समाचार पत्रों के दिग्गजों से कि कितना धन आता है अरब देशों से उनके ईमान को खरीदने के लिए ताकि वे अपनी लेखनी की चतुराई से असत्य को सत्य का जामा पहना सकें। पूछिए इन दिग्गजों से कि वे सदा राजनीतिज्ञों में व्याप्त भ्रष्टाचार की बातें क्यों करते हैं - क्या इसलिए कि उनकी अपनी भ्रष्टाचार की ओर जनता का ध्यान न जाये?** सत्य यह है कि हिंदुओं ने एक मस्जिद (मुसलमानों के इबादत की जगह) नहीं, बल्कि पिछले 44 वर्षों से हिंदू मंदिर के रूप में प्रयोग किए जाने वाले एक ढाँचे को गिराया था, जहाँ पिछले 57 वर्षों से कभी नमाज़ नहीं पढ़ी गई थी। अतः उसे मस्जिद का नाम देने की भूल न करें, क्योंकि मस्जिद के नाम से जुड़ी होती है छवि, एक पूजा के स्थान की। **सही नाम का प्रयोग अत्यंत आवश्यक है। इसकी उपेक्षा न करें क्योंकि यह हमारी सोच को सही, या ग़लत दिशा देती है।**

कोएनराड एल्स्ट, पृ 182)। पूछिए ऐसा क्यों? क्योंकि ये झूठे धर्मनिरपेक्ष (जो वास्तव में धर्मनिरपेक्षता की ख़ाल ओढ़े हुए कॉम्युनिस्ट-मार्क्ससिस्ट बुद्धिजीवी हैं) जानते थे कि जितनी ख़ुदाई होगी, उतनी ही उनकी झूठ की पोल खुलती जाएगी।

प्रमाणों का परीक्षण करने देश के कोने-कोने से 40 पुरातत्वज्ञ आए तथा परीक्षण करने के पश्चात् सभी एक मत हुए कि वहाँ मंदिर ही था

डॉ एस पी गुप्ता इलाहाबाद संग्रहालय के संचालक रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर डॉ गुप्ता की टीकाओं से हमें बहुत कुछ जानने को मिलता है। उन टीकाओं का संक्षिप्त विवरण हम आपके लिए प्रस्तुत करते हैं, इस अध्याय में, पर हमारे अपने शब्दों में। संदर्भ - डॉ एस पी गुप्ता, पृष्ठ 112-122 प्रॉफ़ेसर बी बी लाल जो भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के मुख्य निर्देशक रहें हैं, उन्होने 1975 से 1980 के बीच, अयोध्या में बहुत ख़ुदाई की - उस स्थान पर भी जहाँ जन्मस्थान-मस्जिद हुआ करता था। प्रॉफ़ेसर लाल ने वहाँ 14 खाइयाँ खोदीं, यह जानने के लिए कि वह जगह कितनी पुरानी थी। उन खुदाइयों से यह पता चला कि वह नगर कम से कम 3,000 वर्ष पुराना रहा होगा, संभवत: उससे अधिक। ध्यान दें ईसा एवं हज़रत मुहम्मद अभी तक पैदा भी नहीं हुए थे, बाबर को तो अभी सदियों लगने वाले थे। श्री राम का नगर तब भी वहाँ मौजूद था। वहाँ उन खाइयों में बड़े-बड़े समानांतर चौकोर स्तंभों वाले, ईंट और पत्थरों का बना हुआ एक बहुत बड़ा ढाँचा पाया गया। दरवाज़ों पर हिंदू मूर्तियाँ काढ़ी हुई पाई गईं। यक्ष, यक्षी, कीर्ति मुख, पूर्ण घट्ट, कमल के फूल इत्यादि सजावट की वस्तुएँ पाई गईं। प्रॉफ़ेसर बी बी लाल की खुदाइयों से यह भी पता चला कि स्तंभों पर बना हुआ वह ढाँचा बार-बार मरम्मत किया गया, कम से कम तीन बार। प्रॉफ़ेसर बी बी लाल की खुदाइयों ने यह भी दिखाया कि वहाँ एक बहुत बड़ी दीवार थी क़िलेबंदी के लिए, जो बनाया गया था पकाए हुए ईंटों से और जिसकी उम्र रही होगी 3 शताब्दियाँ ईसा के पहले। सोचें, इस्लाम अभी तक जन्मा भी नहीं था। अन्य शब्दों में कहा जाये

तो वहाँ बाबर के पहले भी बहुत कुछ था, जिन्हें झुठलाने में आज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय एवं अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के इतिहासज्ञ जी तोड़ कर लगे हैं। यह एक जानी और मानी हुई बात है कि पुरातात्विक ख़ुदाई में भाग्य का साथ होना भी आवश्यक होता है। कहा जाता है कि केवल कई इंचों के लिए कोई छुपा ख़ज़ाना तक खो देता है। अर्थात्, यदि कई इंच और ख़ुदाई की होती तो संभवतः ख़ज़ाना हाथ लग जाता। दक्षिण की तरफ़ प्रॉफ़ेसर बी बी लाल ने जो खाइयाँ खोदीं थीं, उससे केवल 10-12 फीट की दूरी पर एक बहुत बड़ी ख़ुदाई छूट गई जिसमें 40 से अधिक प्रतिमाएँ बाद में पाई गईं। पर प्रॉफ़ेसर लाल को मिले थे, 16वीं शताब्दी से पहले के तोड़े हुए मंदिर के स्तंभ, जो अन्य पुरातत्वज्ञों को नहीं मिल पाये थे। ये 40 से अधिक प्रतिमाएँ तब पाई गईं जब उत्तर प्रदेश सरकार के अधिकारी पूर्व एवं दक्षिण के खाइयों के बग़ल की ज़मीन को समतल कर रहे थे। बड़ी चर्चा रही इनकी समाचार पत्रों में 18 जून 1992 से। **यहाँ ध्यान दीजिए तारीख़ पर। जून 1992। बाबरी ढाँचा अभी गिरा नहीं था। हमारे न्यायालय इन प्रमाणों की उपलब्धि से अनभिज्ञ नहीं थे।** 2 जुलाई 1992 को पुरातत्वज्ञों का एक और दल उस स्थान पर पहुँचा। इस दल में थे डॉ वाई डी शर्मा, जो सर्वेक्षण के उप-मुख्य निर्देशक रहे थे, डॉ एस पी गुप्ता, जो इलाहाबाद संग्रहालय के संचालक रहे थे, और बहुत सारे वरिष्ठ पुरातत्वज्ञ भी वहाँ पहुँचे। उन्होने हिंदू मंदिरों की उन 40 से अधिक कलाकृतियों व पुरातात्विक अवशेषों का परीक्षण किया। उन्होने पाया कि ये वस्तुएँ 10वीं से 12वीं शताब्दी के बीच की थीं। इन वस्तुओं में थीं कई आमलका जो उन दिनों की समस्त उत्तर भारतीय मंदिरों में (कोनार्क और खजुराहो) आज भी देखने को मिलती हैं। एक और वैसा ही आमलका पाया गया एक बार फिर (1 जनवरी 1993 को) एक खाई में, जब उत्तर प्रदेश के सरकारी अधिकारी, फ़ैज़ाबाद के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की मौजूदगी में, मंदिर के चारों तरफ़ एक नया घेरा बना रहे थे। और भी मूर्तियाँ पाई गईं जो थीं चक्र-पुरुष, परशुराम, मैत्री देवी, शिव व पार्वती की, जो 10वीं से 12वीं शताब्दी के बीच की थीं। ये सभी मूर्तियाँ उस धरती के नीचे नहीं मिल सकती थीं यदि वहाँ मस्जिद के पहले मंदिर न रहा होता। बाद के दिनों में, पूर्व के हिस्से में, पुरातत्वज्ञों की एक और टोली ने खुदाइयाँ की और उन्होने 10 फीट से अधिक ज़मीन खोदीं, पूर्व व दक्षिण की तरफ़,

मस्जिद के पहले, एवं इसके अनुसार राम जन्म भूमि हिंदुओं के हवाले कर दी जानी चाहिए तो अचानक हमारी न्यायालयों ने एक बार पुनः कुम्भकर्ण निद्रा की शरण ली। कहीं ऐसा तो नहीं कि जब उच्च न्यायालय ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग को फिर से खुदाई करने का आदेश दिया तो उन्हें ऐसी आशा रही होगी कि 1975 से आरम्भ कर अगले बीस वर्षों तक अनेक बार खुदाई हो चुकी है और जो कुछ धरती के नीचे रहा होगा उसे अब तक अवश्य खोद कर निकाल लिया गया होगा एवं अब और निकालने को शायद कुछ भी बचा न होगा। इस प्रकार पर्याप्त प्रमाण के अभाव में हिंदुओं को एक बार फिर अपने अधिकार से वंचित कर देना सहज होगा। जब भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने खुदाई आरम्भ की तो धीरे-धीरे कुछ और प्रमाण सामने आने लगे। तब नए आरोप लगाये गए एवं कहा गया कि मुसलमान मज़दूरों को खुदाई के काम में लगाना चाहिए। वह बात भी मान ली गई। इन सबके बावजूद सत्य छिपाया न जा सका। फिर भी न्यायालयों ने इस विषय को एक बार फिर से ताक पर रख दिया। **कितना सुन्दर एवं सहज है न्याय की यह प्रक्रिया जो वे ईसाई-अँग्रेज़ हमें विरासत में दे गए! न्यायाधीशों के आचरण हमें बताते हैं कि उन्होंने निर्णय कर रखा है कि उन्हें किसका पक्ष लेना है -- सत्य का या असत्य का, न्याय का या अन्याय का, सत्ता का या जनता का, धन रूपी पुरस्कार का या निर्धन के आशीर्वाद का।** देर-सवेर जनता को भी एक निर्णय लेना होगा। क्या करना है ऐसे न्यायाधीशों का?

उसे मस्जिद क्यों कहते हैं हमारे ये समाचार पत्र

फ़ैज़ाबाद के न्यायाधीश ने 3 मार्च 1951 (ध्यान रहे, 41 वर्ष के पश्चात् 1992 में बाबरी ढाँचा गिरा) को न्यायालय के लिखित प्रमाणों में लिपिबद्ध किया कि **अयोध्या के मुस्लिम निवासियों ने शपथपत्र पर यह लिख कर न्यायालय को दिया कि कम से कम 1936 से उस ढाँचे का मस्जिद के रूप में प्रयोग नहीं किया गया, न ही वहाँ कोई नमाज़ अदा की गई। न्यायाधीश ने यह भी लिपिबद्ध किया था कि ऐसा कुछ भी उनके सामने नहीं लाया गया जो उन शपथपत्रों को झूठा सिद्ध कर सके** (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 168-169)। अँग्रेज़ों के समय से, 1936 के बाद, उस जगह पर

सर्वोच्च न्यायालय तो यही सोचती - हम हैं सर्वोच्च, अतः हमारी मर्ज़ी, हम लें 52 साल या 100 साल, कौन पूछने वाला हमें?

कौन था ज़िम्मेदार बाबरी ढाँचे के गिरने का? वे राम भक्त? या वे न्यायाधीश जिन्होनें न्याय की मर्यादा न रखी? उस सर्वोच्च न्यायालय ने, जिसने उँगली उठाई समूचे हिंदू समुदाय की तरफ़, इसे एक शर्मनाक घटना बताते हुए, क्या उन्हें वही उँगली स्वयं अपनी तरफ़ नहीं उठानी चाहिए थी? यदि अपने गरेबान में झाँक कर देखा होता उन्होने तो आज यह समस्या, समस्या न बनी रहती।

मजे की बात तो यह है कि तुरंत तहक़ीक़ात की गई। उन्होंने 50 साल नहीं लिए क्योंकि कालिख उनके अपने मुँह पर आन पड़ी थी। हाँ, जब प्रश्न उठता है 80 करोड़ हिन्दुओं की भावनाओं का तब 44 तो क्या उसके बाद और 8 वर्ष बीत चुके हैं पर सर्वोच्च न्यायालय तो यही सोचती रही कि हम हैं सर्वोच्च, हमारी मर्ज़ी, हम लें 52 साल या 100 साल, कौन पूछने वाला हमें।

एक बार फिर वही खेल-तमाशा - इस बार उच्च न्यायालय द्वारा

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आदेश पर, ए-एस-आई (आर्किऑलॉजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया अर्थात भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग) ने एक बार पुनः खुदाइयाँ की, और 25 अगस्त 2003 को अपना 574 पृष्ठों का रिपोर्ट इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया। इस रिपोर्ट के अनुसार, उस विवादास्पद स्थान पर, एक पुरातन मंदिर का पाया जाना, एक बार फिर सिद्ध होता है। तब से आज तक कई वर्ष बीत चुके हैं पर न्यायालय अभी तक सोच ही रही है! मुझे अच्छी तरह याद है कि उन दिनों, अर्थात 25 अगस्त 2003 के पहले, बार-बार लगातार कुछ दिनों के अन्तर पर, इलाहाबाद उच्च न्यायालय हमारे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग को अंतिम चेतावनी दिया करती थी कि जल्दी खत्म करो अपनी खुदाई इतने दिनों के अंदर। पर जब एक बार रिपोर्ट हाथ में आ गई और एक बार पुनः यह बात सिद्ध हुई कि वहाँ मंदिर था

जहाँ सरकारी अधिकारियों ने कुछ हिस्से को काटा था। इस दौरान पाया गया एक बहुत गहरा गड्ढा और अवशेष, कम से कम 3 ठूँसे हुए फ़र्शों की, जो थीं 10वीं से 16वीं शताब्दी के बीच की, और एक फ़र्श जो थी 1ली से 3री शताब्दी के बीच की। दो दीवारें पाई गईं जो 1ली से 3री शताब्दी (ईस्वी) के बीच की बनी थीं। प्रॉफ़ेसर बी आर ग्रोवर ने एक बहुत बड़ी और फैली हुई पके ईंटों की फ़र्श भी पाई। ध्यान दें, बाबर भारत आया 16वीं शताब्दी में। इन सभी खुदाइयों से एक बात और स्पष्ट हुई। वह यह कि जन्मभूमि स्थान पर हिंदू मंदिर बनाए गए थे कई बार, केवल पिछले 450 वर्षों को छोड़ कर, जब मुस्लिमों ने मंदिर तोड़ कर उस जगह बनाई एक मस्जिद, **जिसे मुसलमानों ने नाम दिया “जन्मस्थान-मस्जिद” का अपने ही लिखित प्रमाणों में। आप अपने आप से पूछिए - जन्मस्थान किसका? यदि बाबर का नहीं, आपका और हमारा नहीं, उन कॉम्युनिस्ट इतिहासज्ञों का नहीं जो बार-बार समाचार पत्रों में यह कहते नहीं थकते कि राम का नहीं - तो किसका जन्मस्थान? पैग़ंबर मुहम्मद का या फिर कार्ल मार्क्स का?** इन सभी खुदाइयों से एक बात और स्पष्ट हुई। वह यह कि अंतिम बार, जो आलीशान मंदिर पत्थरों से वहाँ बना होगा, वह रहा होगा 11वीं-12वीं शताब्दी का। इसके सिवा कुछ अन्य मूर्तियों के आधार पर निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि उसी स्थान पर 9वीं-10वीं शताब्दी का प्रतिहार शैली का एक मंदिर रहा होगा, जबकि गढ़वालों के समय वहाँ एक नए एवं भव्य मंदिर के बनाने की चेष्टा की गई होगी जिसे, वस्तुतः, एक प्रकार से जीर्णोद्धार कहा जा सकता है। इन सभी विषयों पर देश के वरिष्ठ पुरातत्वज्ञों की राय जानने के लिए और उन्हें एक अवसर देने के लिए कि वे स्वयं इन प्रमाणों को देखें और इनको अपने हाथ में लेकर जाँचें और अपनी राय दें -- अयोध्या के तुलसी स्मारक भवन में देश के कोने-कोने से 40 पुरातत्वज्ञ सम्मिलित हुए 10 से 13 ऑक्टोबर (अक्तूबर) 1992 के बीच। मत भूलें कि बाबरी ढाँचा अभी अपनी जगह पर अच्छा-भला खड़ा था। उनमें सम्मिलित थे मद्रास से प्रॉफ़ेसर के वी रमन, धारवाड़ से प्रॉफ़ेसर ए सुन्दरा, बैंगलोर से डॉ एस आर राव, अहमदाबाद से प्रॉफ़ेसर आर एन मेहता, जयपुर से श्री आर सी अग्रवाल, सागर से डॉ एस के पाण्डे, नागपुर से प्रॉफ़ेसर अजय मित्र शास्त्री, बनारस से डॉ टी पी वर्मा, फ़ैज़ाबाद से प्रॉफ़ेसर के पी नौटियाल, पटना से प्रॉफ़ेसर बी पी सिन्हा, भोपाल से डॉ

सुधा मलैया, दिल्ली से प्रॉफ़ेसर के एस लाल एवं दवेन्द्र स्वरूप, इलाहाबाद से प्रॉफ़ेसर वी डी मिश्रा, रीवा से प्रॉफ़ेसर आर के वर्मा, एवं अन्य अनेक जिनमें सम्मिलित थे वाई डी शर्मा, के एम श्रीवास्तव और एस पी गुप्ता जिन्होने अयोध्या में ख़ुदाई एवं परीक्षण का कार्य किया था। परीक्षण के पश्चात् वे सभी एकमत हुए कि वहाँ, जन्मस्थान पर, निश्चयत: मंदिर था। 6 दिसम्बर 1992 अभी आया नहीं था। बाबरी ढाँचा अभी गिरा नहीं था। उसके गिरने की आवश्यकता भी नहीं थी। न्यायालय की सुनवाई समाप्त हो चुकी थी, बाबरी ढाँचे के गिरने से 1 महीने पहले। न्यायालयों के पास सारे देश के कोने-कोने से आए 40 पुरातत्वज्ञों के राय उपलब्ध थे। उनकी सारी सुनवाई भी 4 नवंबर 1992 को समाप्त हो चुकी थी। फिर उन्होने न्याय क्यों नहीं दिया? यदि उन्होंने न्याय दिया होता तो क्या बाबरी ढाँचा गिरा होता? कौन था वास्तविक रूप से जिम्मेदार उस ढाँचे के गिरने का? अन्याय की सीमा को पार करने के बाद, उसे सहते रहना कायरता ही कहलाएगी। हम उसे सहिष्णुता कहने की भूल तो नहीं कर सकते।

न्यायालय किसे कहते हैं - हाँ न्यायालय इसे कहते हैं

बात पुरानी है। हिंदुओं ने न्यायालय से अपील की थी। 4 वर्ष बीत चुके थे। 1955 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने लिखा था कि - यह बड़े ही दु:ख की बात है कि 4 वर्षों तक इस तरह की समस्या अनिर्णीत रही (संदर्भ अरुण शोउरी पृ रोमन 6-11)

अर्थात् इलाहाबाद उच्च न्यायालय को इस बात का ज्ञान था कि यह समस्या अत्यंत महत्वपूर्ण है, और इसे इस प्रकार अनिर्णीत रखना किसी भी प्रकार से उचित नहीं। 1955 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने जब वह बात कही थी तब केवल 4 वर्ष ही बीते थे। देखते-देखते और भी 40 वर्ष बीत गए। न्यायाधीश भूल गए कि उन्हें वेतन मिलता है जनता के दिए हुए कर से। जब जनता न्याय माँगती है उनसे, तो उन्हें इसमें कोई रुचि नहीं। आया जुलाई 1992 और अब भी न्यायालय सुनवाई कर रही थी। शायद ऊँचा सुनते हैं इसलिए 42 वर्ष बीत गए पर जनता की आवाज़ उनके कानों तक न पहुँची। जुलाई 1992 में कर-सेवा आरंभ हुई तो अचानक सर्वोच्च न्यायालय की

राजनयिक नेता जो जनमत तैयार करते हैं, क्या उनका यह कर्तव्य नहीं था कि वे इन तथ्यों को बार-बार जनता के सामने लाते? **यह न करके उन्होने जनता को बार-बार यही कहा कि हमें सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का अनुसरण करना चाहिए। वह निर्णय जो कोई निर्णय ही नहीं था।** हमारे राज नेता चाहते हैं कि हम भागते रहें, इस मृगमरीचिका के पीछे, तब तक, जब तक हम थक हार कर बैठ न जाएँ। **भारत के राष्ट्रपति ने सर्वोच्च न्यायालय से क्या पूछा था? बस यही कि क्या वहाँ मस्जिद के पहले मंदिर हुआ करता था? सर्वोच्च न्यायालय ने कहा - हम उत्तर नहीं देंगे।** कब कहा, 3,000 घंटे सोचने के बाद।

इसे बड़े सुंदर ढंग से, पंजाब उच्च न्यायालय के, अवकाश प्राप्त मुख्य न्यायाधीश एम रामा जॉयस ने, (राष्ट्र के संविधान के धारा 143(1) के अंतर्गत राष्ट्रपति के विशेष संदर्भ संख्या 1/1993 का उद्धरण देते हुए), कहा "सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय किया, कि वे निर्णय नहीं करेंगे" (संदर्भ - एम रामा जॉयस, पृ 96)

कितना सुंदर निर्णय था हमारे सर्वोच्च न्यायालय का। न्याय हो तो ऐसा। इतिहास के पन्नों पर सुनहरे अक्षरों में लिखा जाना चाहिए इसे। **यह न्याय प्रणाली हमें ईसाई-अँग्रेज़ों ने दी थी, हिंदू न्याय प्रणाली का उन्मूलन कर (मैकॉले 1835 ईस्वी)।** अब तक हमने देखी हमारे सर्वोच्च न्यायालय की मुस्तैदी, 44 साल और 80 करोड़ हिंदुओं की भावनाओं की क़ीमत, इन न्यायाधीशों की नज़रों में। और अब देखिए जब इनकी पीठ पर लात पड़ती है तो कितना दर्द होता है इन्हें।

अभी की बात है, मुख्य न्यायाधीश ने कहा - जब समाचार पत्रों ने, कामवासना के कलंक के संदर्भ में, कई न्यायाधीशों का नाम उछाला, तो मैं कई रातों तक सो नहीं सका (संदर्भ द फ़्री प्रेस जर्नल, मुंबई संस्करण, 29 मार्च 2003, पृ 3)

मज़े की बात तो यह है, कि तुरंत तहक़ीक़ात की गई। उन्होने 50 साल नहीं लिए, क्योंकि कालिख उनके मुँह पर आन पड़ी थी। पर जब प्रश्न उठता है 80 करोड़ हिंदुओं की भावनाओं का, तो 44 तो क्या उसके बाद और 8 वर्ष और बीत चुके हैं, पर

3 हजार घंटे सोचने के बाद सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय देखिए

मुस्लिम लीडरों ने दावा किया था कि यदि यह सिद्ध कर दिया जाए कि उस जगह पर मस्जिद के पहले एक मंदिर हुआ करता था तो वे वह जगह हिंदुओं को दे देंगे। इस बात पर चंद्र शेखर सरकार ने यह तय किया कि सारा निर्णय इस बात पर टिका होना चाहिए कि क्या वहाँ मस्जिद के पहले मंदिर था? भारत के राष्ट्रपति ने यही प्रश्न सर्वोच्च न्यायालय से किया। छुट्टियों एवं गर्मी की छुट्टियों को छोड़ कर, सर्वोच्च न्यायालय के 5 न्यायाधीशों ने सप्ताह में 3 दिन, फ़रवरी से सितंबर 1994 तक, मुक़दमे पर सुनवाई की और अंत में निर्णय लिया कि हम उत्तर नहीं देना चाहते (संदर्भ - अरुण शोउरी, पृ रोमन 10)। जरा सोचिए, 3,000 घंटे उन्होने बिताए इस बात पर और अंत में परिणाम लड्डू। पूछिए 3,000 घंटे कैसे? फ़रवरी से सितंबर तक 8 महीने होते हैं। 5 न्यायाधीश गुणा 8 महीने, गुणा 4 सप्ताह प्रति महीने, गुणा 3 दिन प्रति सप्ताह, गुणा 7 घंटे प्रति दिन, कुल 3,360 घंटे। इस में से माना कि 360 घंटे उनकी छुट्टियों के। बाकी रहे 3000 घंटे

भारत के राष्ट्रपति को उत्तर दिया सर्वोच्च न्यायालय के 3 न्यायाधीशों ने। उनके नाम थे मुख्य न्यायाधीश एम एन वेन्कटाचालिआह, न्यायाधीश जे एस वर्मा, न्यायाधीश जी एन रे। **हम बड़े आदर के साथ जवाब देना अस्वीकार करते हैं और इसे आपको वापस भेजते हैं -** पैरा 100(11) उनके न्याय का। उन तीनों ने अपने इस न्याय पर नई दिल्ली में 24 अक्टूबर 1994 को हस्ताक्षर किए थे (संदर्भ - द सुप्रीम कोर्ट जजमेंट, पृ 64)। भारत के राष्ट्रपति को उत्तर दिया सर्वोच्च न्यायालय के अन्य 2 न्यायाधीशों ने। उनके नाम थे न्यायाधीश ए एम अहमदी, न्यायाधीश एस पी भरूचा। **राष्ट्रपति को हम वापस करते हैं आदर के साथ, बिना उत्तर दिए -** पैरा 165 उनके न्याय का। उन दोनों ने अपने इस न्याय पर नई दिल्ली में 24 अक्टूबर 1994 को हस्ताक्षर किए (संदर्भ - द सुप्रीम कोर्ट जजमेंट, पृ 88)

नींद टूटी। उन्होने उत्तर प्रदेश सरकार से कहा कि यदि वे कर सेवा रुकवा सकें तो सर्वोच्च न्यायालय इस मुक़दमे को खुद अपने हाथों में ले लेगी और इसे पूरी तरह से निपटा देगी। कर सेवा तो खैर रुक गई पर सर्वोच्च न्यायालय भी अपनी ज़बान से मुक़र गई। उन्होने गेंद फिर इलाहाबाद उच्च न्यायालाय की ओर फेंक दी, बोले जल्दी निपटाओ इसे। हिंदुओं ने सोचा कम-से-कम इस बार न्याय मिलेगा उन्हें। तय किया 6 दिसंबर 1992 को होगी कर सेवा। संयोग से इस बार इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने काम किया और उनकी सुनवाई समाप्त हुई 4 नवंबर 1992 को। उनके पास पूरा 1 महीना बाकी था निर्णय लेने को। उत्तर प्रदेश सरकार और दूसरों ने बार-बार अपील की, कि न्यायालय सुना दे अपना निर्णय, जो भी हो मंज़ूर उसे। पर एक न्यायाधीश चला गया छुट्टी मनाने और निर्णय गया खड्डे में। 6 दिसंबर 1992 को वह ढाँचा गिर गया। **उस ढाँचे को गिरने की आवश्यकता न होती यदि न्यायाधीश को छुट्टी अधिक प्यारी न होती। आज न्यायाधीश बाबरी ढाँचा गिराने वालों को सजा देना चाहते हैं। पर जिनकी अकर्मण्यता के कारण यह ढाँचा गिरा, उन्हें कौन सजा देगा? ये न्यायाधीश दूसरों के लिए न्याय करते हैं। जब ये स्वयं अन्याय करें तो इन्हें कटघरे में लाकर कौन खड़ा करे?**

डॉ कोएनराड एल्स्ट लिखते हैं - इस बात को ध्यान में रखते हुए कि 42 वर्षों के इस अंत हीन मुक़दमेबाज़ी के उपरांत, जिस प्रकार से, मूर्खता भरे अहंकार के साथ, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने, पूर्व निर्धारित 6 दिसंबर की कर सेवा के, कुछ ही दिनों पहले, अपने निर्णय को एक बार फिर से ताक पर रख दिया - यह क़तई उचित न होगा, कि हम अति-उत्साही राम भक्तों को, उनके न्याय की प्रक्रिया के प्रति निरादर, के लिए दोष दें - उस न्याय की प्रक्रिया के प्रति, जिसका यह दायित्व है कि वह लोकतांत्रिक व्यवस्था की मर्यादा को बनाए रखे। निश्चय ही, उन्होने निरादर प्रकट किया है, न्यायालयों का राजनीतिक खेलों के लिए, अनुचित प्रयोग के प्रति। और, उन्होने बिल्कुल सही बग़ावत की है, न्यायाधीशों के हिंदू समाज के प्रति, अवज्ञा के लिए - वह अवज्ञा, जो साफ़ झलकती है, उनके इस विवाद को सुलझाने की अनिच्छा

से, वह भी ऐसा विवाद, जो राम जन्मभूमि जैसा महत्वपूर्ण हो (उद्धृत डॉ को एल्स्ट, पृ 129)

ग्यारहवीं शताब्दी का श्री विष्णु-हरि का शिलालेख जो स्पष्ट रूप से हमें बताता है कि यह मंदिर था श्री राम का

6 दिसंबर 1992 को जब वह ढाँचा गिरा तो उसके मलबे से बहुत कुछ मिला जिसमें एक बहुत ही महत्वपूर्ण शिलालेख था, जो एक अच्छा प्रमाण बन सकता था राष्ट्रपति के उस प्रश्न के उत्तर में जो उन्होनें सर्वोच्च न्यायालय से पूछा था। उस शिलालेख में 20 पंक्तियाँ थीं। शिला 5 फुट लंबी, 2 फुट चौड़ी, अढ़ाई इंच मोटी और बहुत ही भारी थी, जिसे 4 हट्टे-कट्टे कर-सेवक बड़ी कठिनाई से उठा पाए थे। वह शिलालेख संस्कृत में, 11वीं सदी की नागरी लिपि में थी। यह शिला उस मंदिर के दीवार पर लगाई गई होगी जिसके निर्माण का वर्णन इस शिलालेख में मिलता है - जिस मंदिर तोड़ कर उसके ऊपर यह मस्जिद बनाई गई होगी। 15वीं पंक्ति हमें स्पष्ट रूप से बताती है कि एक सुंदर मंदिर श्री विष्णु-हरि का, भारी पत्थरों से बनाया गया था। 17वीं पंक्ति हमें बताती है कि यह सुंदर मंदिर, मंदिरों की नगरी अयोध्या जो कि साकेत-मंडल में था। यहाँ ध्यान दीजिए साकेत उस ज़िले का नाम हुआ करता था जिसका अयोध्या एक अंग था - अर्थात् यह लिखावट इसी अयोध्या के बारे में थी, जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं यहाँ। 19वीं पंक्ति हमें बताती है भगवान श्री विष्णु जिन्होने मानभंग किया राजा बलि का, व अंत किया दशानन रावण का। यह स्पष्ट रूप से हमें बताती है कि यह मंदिर था श्री राम का, जिन्होने अंत किया था रावण का (संदर्भ - डॉ एस पी गुप्ता, पृष्ठ 117-120, उद्धृत - प्रॉफ़ेसर अजय मित्र शास्त्री (द चेयरमैन ऑफ़ एपिग्राफ़िकल सोसायटी ऑफ़ इंडिया), पुरातत्व में (ऑफ़िशीयल जर्नल ऑफ़ इंडियन आर्किओलॉजिकल सोसायटी) नंबर 23 (1992-1993)। डॉ एस पी गुप्ता हमें बताते हैं कि **बाबरी तरफ़ के प्रॉफ़ेसर आर एस शर्मा एवं अथार अली ने कहा था कि जब तक,**

उन्हें उन दिनों का ऐसा कुछ लिखा हुआ नहीं दिखाया जाता, जो इस बात को दर्शाता हो कि वहाँ एक जमाने में राम मंदिर हुआ करता था, तब तक वे यह मानने को तैयार नहीं, कि वहाँ कोई हिंदू मंदिर रहा होगा। अब जब श्री विष्णु-हरि का शिलालेख मिला तो ये कहने लगे कि यह शिलालेख जाली है। इस पर डॉ एस पी गुप्ता कहते हैं, कि हम अब भी अपनी बात दोहराते हैं, कि आप बुलाइए विश्व के किसी भी कोने से किसी भी विशेषज्ञ को, और यदि परीक्षण के बाद वे कह दें कि यह शिलालेख जाली है, तो हम दो लाख रुपये देने को तैयार हैं। इस चुनौती का वे कोई उत्तर नहीं देते (संदर्भ - डॉ एस पी गुप्ता, पृष्ठ 120)। ये जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय एवं अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के स्वनामधन्य मार्क्ससिस्ट इतिहासज्ञ न तो किसी निरपेक्ष विशेषज्ञ को परीक्षण के लिए बुलाते हैं, अपितु समय-समय पर समाचार पत्रों में झूठा बयान अवश्य देते रहते हैं, जिससे लोग झूठ को सच मानते रहें। डॉ कोएनराड एल्स्ट हमें बताते हैं, कि यदि ये अपने आप को धर्मनिरपेक्ष कहने वाले, सचमुच अपनी ही कही हुई बात पर विश्वास करते, तो अवश्य ही वे विदेशों से निरपेक्ष पुरातत्वज्ञों को बुला कर इस बात का भाँडा फोड़ सकते थे, कि सब जाली हैं, पर उन्होने ऐसा नहीं किया। वह पूछते हैं ऐसा क्यों? वह बताते हैं कि यह मामला तब मंत्री अर्जुन सिंह के अधिकार क्षेत्र में था, जो इस बात की तुरंत व्यवस्था करा सकते थे, क्योंकि वह भी इन लोगों की तरह अपने आप को धर्मनिरपेक्ष गुट का मानते थे। पर हुआ यह कि कपिल कुमार, बी डी चट्टोपाध्याय, के एम श्रीमाली, सुविरा जायसवाल और एस सी शर्मा ने ज़ोर शोर से इसे जाली क़रार दिया (संदर्भ - डॉ कोएनराड एल्स्ट, पृ 181-182)

कब तक छुपाओगे सत्य को बादलों के पीछे? एक दिन सूरज की रोशनी की तरह बाहर आएगा वह, अँधेरे को चीर कर!